प्रयास

तृतीय अंक

कार्यालय महालेखाकार (लेखापरीक्षा), उत्तराखण्ड
सी–1/105, वैभव पैलेस, इन्दिरा नगर, देहरादून–248006

सत्यमेव जयते

श्री सौरभ नारायन
महालेखाकार (लेखापरीक्षा),
उत्तराखण्ड, देहरादून

संरक्षक की कलम से

मेरे लिए यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि दैनिक कार्यालयीन कार्यकलापों में हिन्दी का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ा है। इस कार्यालय द्वारा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए प्रकाशित की जाने वाली गृहपत्रिका ''प्रयास'' के विगत दो संस्करणों के सफलतापूर्वक प्रकाशन से प्रेरित होकर हिन्दी में लेखन तथा साहित्य सृजन के प्रति कार्यालय कर्मियों का उत्साह अत्यन्त सराहनीय है।

पत्रिका परिवार द्वारा कार्यालय में साहित्यिक वातावरण बनाना तथा प्रेरणा व प्रोत्साहन की नीति के अर्न्तगत हिन्दी में कार्य करने के लिए, प्रेरित करने में, गृहपत्रिका 'प्रयास' के तृतीय संस्करण का प्रकाशन अत्यंत उपयोगी होगा, इसमें दो राय नहीं है। प्रकाशन में निरन्तरता तथा रचनाओं की सारगर्भिता बनाये रखने में पत्रिका परिवार के प्रयास के लिए हार्दिक शुभ कामनाएं।

महालेखाकार (लेखापरीक्षा)

सत्यमेव जयते

सुश्री विनीता मिश्र
वरिष्ठ उपमहालेखाकार (लेखापरीक्षा)

प्रधान संपादक की लेखनी से

गृह पत्रिका 'प्रयास' का तृतीय अंक प्रकाशित करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है। पत्रिका प्रकाशन में गतिशीलता एवं निरन्तरता बनाए रखने में आप सभी का सहयोग उत्साहवर्धक तथा हिन्दी साहित्य के प्रति आपकी अभिरूचि का परिचायक है। रचनाओं में गुणात्मक सुधार तथा पाठकगण के सराहना पत्रों से पत्रिका की लोकप्रियता का पता लगाया जा सकता है। सृजन में मौलिकता अत्यन्त सराहनीय है। नये रचनाकारों की रचनाओं को यथासंभव स्थान दिया जा रहा है, ताकि उदीयमान रचनाकारों को प्रोत्साहन मिल सके।

राजभाषा हिन्दी के प्रति अपने उत्तरदायित्व से हम सभी भली–भाँति परिचित हैं। राष्ट्रीय महत्व के कार्यों में सहभागिता व राजभाषा कार्यान्वयन के लिए निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किये गये प्रयासों को गति प्रदान करना हमारा परम लक्ष्य है। पत्रिका परिवार की लगन तथा रचनाकारों की उत्कृष्ट रचनाओं के फलस्वरूप साहित्यिक वातावरण के सृजन से, हम अपने लक्ष्य में कामयाब होंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। पाठकों के अमूल्य सुझाव की कामना के साथ।

विनीता मिश्र

वरिष्ठ उपमहालेखाकार (लेखापरीक्षा)

श्री रवि शंकर
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी/हिन्दी

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी/हिन्दी की लेखनी से

सरल एवं सहज भाषा में अपनी बात को कहने का यह तीसरा 'प्रयास' है। पिछले दो प्रयासों में 'प्रयास' के प्रथम अंक को मुख्यालय द्वारा ''क'' क्षेत्र में कार्यालयीन हिन्दी पत्रिकाओं में सर्वश्रेष्ठ पत्रिका घोषित किया गया था।

कार्यालय के प्रतिभाशाली लेखकों, कवियों व उनके परिवार के सदस्यों ने यात्रा संस्मरण, कहानी, विचारों, बौद्धिक लेखों व कविताओं के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किए हैं। आशा है उनका यह प्रयास पुनः उसी प्रकार सार्थक होगा, जिस प्रकार पिछले दो 'प्रयास' प्रकाशनों में सार्थक हुआ था। इस सम्बन्ध में, विभिन्न कार्यालयों से प्राप्त बधाई व शुभकामना सन्देश इस बात के द्योतक हैं।

विश्वास है कि सद्भावपूर्ण रूप से राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार में 'प्रयास' का यह अंक सार्थक सिद्ध होगा।

पत्रिका परिवार

संरक्षक	:	श्री सौरभ नारायन, महालेखाकार
प्रधान संपादक	:	सुश्री विनीता मिश्र, वरिष्ठ उपमहालेखाकार
परामर्शदाता	:	श्री रामपाल सिंह, उपमहालेखाकार श्री पी.एस. रावत, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी
संपादक	:	श्री संजय राजदान, लेखापरीक्षा अधिकारी
उपसंपादक	:	श्री रवि शंकर, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी
संकलनकर्ता	:	श्री प्रभाकर दुबे, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी सुश्री रेखा, कनिष्ठ अनुवादक
संकलन सहायक	:	श्री अरविन्द कुमार उपाध्याय, लेखापरीक्षक
सहायक	:	आरती बिष्ट, एम.टी.एस.

आपके चंद सराहनीय पत्र – हमारे लिए महत्वपूर्ण

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित ''प्रयास'' के द्वितीय अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका में समाविष्ट सभी रचनाएँ ज्ञानवर्द्धक एवं रोचक हैं। मुखपृष्ठ आकर्षक है। विशेष रूप से कुंभ मेला का दृश्य अत्यधिक आकर्षक है।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (सा. एवं सा.क्षे. ले.प.)
तमिलनाडु एवं पुद्दुचेरी

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित ''प्रयास'' का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ, हार्दिक धन्यवाद। पत्रिका में आपके कार्यालय के कार्यक्रमों की झांकियाँ साफ नज़र आती हैं। सामाजिक एकता में भाषा के योगदान पर लिखे गये लेख सराहनीय हैं। सार्थक सामग्री के चयन हेतु बधाई।

पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए संपादक मंडल को बधाइयाँ।

पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति तथा उज्ज्वल भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

हिन्दी अधिकारी
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (सा. एवं सा.क्षे. ले.प.)
केरल, तिरूवनंतपुरम

उपरोक्त विषयक आपके पत्र सं.–हिन्दी/गृह पत्रिका–प्रयास/8–2010/57 दिनांक 12.10.12 द्वारा प्रेषित, गृह पत्रिका 'प्रयास' का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ, धन्यवाद।

वार्षिक पत्रिका 'प्रयास' में प्रकाशित लेख एवं कविताएं सारगर्भित एवं ज्ञान वर्धक हैं। राजभाषा के उत्थान में 'प्रयास' पत्रिका का सहयोग सराहनीय होगा।

पत्रिका में प्रकाशित लेख ''भारत–एक नज़र'', ''झंझावातों/बाधाओं के बीच बढ़ती हिन्दी'', ''भारत की दो महान विभूतियाँ'' तथा कविताओं में ''और रावण मारा गया'' ''एक लड़की'' एवं ''सक्षम बनकर'' बहुत अच्छे लगे।

पत्रिका के स्वर्णिम भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

कार्यालय महालेखाकार (लेखा व हकदारी)-द्वितीय,
उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

आपके कार्यालय की हिन्दी गृह पत्रिका 'प्रयास' का द्वितीय अंक सधन्यवाद प्राप्त हुआ।

पत्रिका में समाविष्ट सभी रचनाएं, कहानियां, कविताएं एवं लेख अत्यंत रोचक, पठनीय तथा ज्ञानवर्धक हैं। विशेष रूप से पत्रिका का मुख पृष्ठ निसर्ग से भरा हुआ एवं आकर्षक है। प्रवीण कुमार श्रीवास्तव द्वारा लिखित लेख 'सच्चा मित्र' एवं मीरा दुबे द्वारा रचित लेख 'जीवन में सत्संग की महत्ता' सर्वाधिक रोचक एवं प्रेरणादायी हैं।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाओं सहित।

प्रधान महालेखाकार का कार्यालय
(लेखा एवं हकदारी) -1 महाराष्ट्र

आपके कार्यालय से प्रकाशित हिन्दी गृह पत्रिका 'प्रयास' के द्वितीय अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका का आवरण पृष्ठ अति सुन्दर है। पत्रिका में समाहित लेख श्री अरूण कुमार चौधरी की 'क्या हो तुम', श्री प्रभाकर दुबे का 'सुबह की सैर', संजना चौहान की 'आदर्श पत्नी', मानसी जैन की 'गरीब माँ', श्री प्रभाकर दुबे का 'जब हाथी ने दौड़ाया', आदि रचनाएं श्रेयकर लगीं।

इसके अतिरिक्त पत्रिका में समस्त रचनाएं रोचक एवं ज्ञानवर्धक हैं। पत्रिका की अविराम प्रगति हेतु हार्दिक शुभकामनाएं।

लेखापरीक्षा अधिकारी
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा) दिल्ली
एन.जी.सी.आर.भवन, आई.पी. एस्टेट
नई दिल्ली- 110002

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्रिका 'प्रयास' का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ है। आपकी पत्रिका, राजभाषा के प्रति आपकी निष्ठा व इसके प्रचार–प्रसार के लिए आपका योगदान, सराहनीय है। पत्रिका का मुद्रण बहुत ही सुंदर है, इस पत्रिका में संकलित सभी रचनाएं एक से बढ़कर एक हैं। उसमें कुछ तो दिल को बहुत ही भा गई हैं, जैसे कि श्री सी.एस. त्रिपाठी की ''झंझावातों/बाधाओं के बीच बढ़ती हिंदी'', कु. षिबी टी. मान्जूरान की ''राष्ट्र को ही नहीं, विश्व को पिरो लें–भाषा से'', अलका सक्सेना की ''भारतीय नारी और समाज'', श्री संदीप सिंह की ''जब सब कुछ सिर्फ ईश्वर'', श्री प्रभाकर दुबे की ''सुबह की सैर'', कु. मानसी जैन की ''गरीब माँ'', श्रीमती अलका श्रीवास्तव के ''नैतिक वचन'', रेखा की ''एक लड़की'' और अश्विनी कुमार पाण्डेय की ''भारतवर्ष संघर्ष गाथा''। आपकी पत्रिका का नाम ही केवल ''प्रयास'' है, लेकिन यह कहने में कोई झिझक नहीं कि आप अपने प्रयास में सौ प्रतिशत सफल रहे हैं।

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा, केन्द्रीय, मुम्बई

उपर्युक्त विषय से संबंधित आपके दिनांक 15.10.2012 के पत्र संख्याः हिन्दी/गृह पत्रिका–प्रयास/8–2010/103 के माध्यम से आपके कार्यालय की हिन्दी गृह पत्रिका ''प्रयास'' के द्वितीय अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। कृपया आभार स्वीकार करें। पत्रिका के माध्यम से राजभाषा हिन्दी के उन्नयन के लिए आपका किया गया प्रयास सराहनीय है। ''प्रयास'' अंक के मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित चित्र उत्तराखण्ड की भव्य संस्कृतिक विरासत को हमारे सामने उजागर करता है। इस अंक में प्रकाशित सभी रचनाएं उच्च कोटि की हैं। विशेष तौर पर प्रभाकर दुबे (सक्षम बन कर), मा. शशांक सक्सेना (हादसे ज़िन्दगी के), प्रवीण कुमार श्रीवास्तव (माँ की याद) तथा रेखा (एक लड़की) आदि रचनाएं विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। इस अंक की साज–सज्जा भी उत्तम है।

पत्रिका के संपादक मंडल तथा सभी रचनाकारों को साधुवाद तथा पत्रिका की उत्तरोत्तर सफलता के लिए 'सुगन्धा' परिवार की हार्दिक शुभकामनाएं।

कार्यालय महालेखाकार (लेखापरीक्षा)
पंजाब

आपके कार्यालय की हिन्दी गृह पत्रिका 'प्रयास' के द्वितीय अंक की प्रति प्राप्त हुई, धन्यवाद। सर्वप्रथम आपको वर्ष 2011 में 'क' क्षेत्र में प्रयास के प्रथम अंक को सर्वश्रेष्ठ पत्रिका घोषित किये जाने पर हार्दिक बधाई। पत्रिका का मुख्य पृष्ठ आकर्षक है और यह उत्तराखण्ड के भौगोलिक एवं धार्मिक परिदृश्य को दर्शाता है। इस पत्रिका में समाहित सभी रचनायें उच्चकोटि की एवं ज्ञानवर्धक हैं। पत्रिका का प्रस्तुत अंक सराहनीय, पठनीय एवं संग्रहणीय है।

श्री महेन्द्र तिवारी की रचना ''और रावण मारा गया'', श्रीमती अलका सक्सेना की ''भारतीय नारी और समाज'', श्री प्रभाकर दुबे की ''सक्षम बन कर'', सुश्री रेखा की ''एक लड़की'' एवं श्री प्रवीण कुमार श्रीवास्तव की ''माँ की याद'' विशेष सराहनीय है।

पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु सम्पादक मण्डल को बधाई व पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएं।

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)
राजस्थान

अनुक्रमणिका

विधा	क्र.सं.	रचना	लेखक	पृष्ठ संख्या
गर्व	1.	भारतीय संदर्भ में गणतंत्र का इतिहास	सी.एस. त्रिपाठी	1
भाषा-चिन्तन	2.	हिंदी भाषा–एक अविरल प्रवाह	अरविंद कुमार मिश्रा	4
	3.	विश्व मंच पर उभरती हिंदी	सी.एस. त्रिपाठी	6
विचार-मन्थन	4.	विकसित भारत का बिखरता समाज	अजय कुमार मिश्रा	8
	5.	क्या लिखूँ	अशोक कुमार	10
	6.	दशहरा मेला	अश्विनी कुमार पाण्डेय	13
	7.	नारी सशक्तीकरण–हकीकत या वहम	कु. रेखा	16
	8.	अपनी छवि को बनाओ बेहतर	संजु रानी	19
	9.	धन की यादें नहीं होतीं पर अनुभव की होती हैं	प्राचीश सिंघल	21
	10.	गरीब की ईमानदारी	प्रवीण कुमार श्रीवास्तव	23
आस्था	11.	सच्चा सुख	रामपाल सिंह	25
	12.	शोक के समंदर में आस्था का सैलाब	प्रभाकर दुबे	27
	13.	सुखी जीवन का आधार, सकारात्मक विचार	मीरा दुबे	32
गज़ल	14.	जब याद हमारी आई होगी	अलका श्रीवास्तव	39
	15.	ज़िंदगी में सदा मुस्कराते रहो	सूर्यपाल	40
	16.	मज़बूर	अश्विनी कुमार पाण्डेय	41
	17.	तुम बरसो	महेन्द्र तिवारी	42
बाल-साहित्य	18.	बात ही कुछ और है	मा. शरज़ील सलीम	43
	19.	पापा की प्यारी	रश्मि दुबे	44

काव्य	20.	आज़ादी के बाद का भारत	अजय त्यागी	45
	21.	भ्रष्टाचार का वायरस	प्रभाकर दुबे	46
	22.	फूलों और शूलों की बातें	अरविंद कुमार उपाध्याय	47
	23.	आपदा एवं तंत्र	प्रवीण कुमार श्रीवास्तव	49
	24.	कलयुग का चरमोत्कर्ष	अरविंद कुमार उपाध्याय	52
	25.	आज के हालात देखिये	हिना सलीम	53
	26.	जिदंगी और मौत	सन्दीप सिंह	54
	27.	पर्वत की नारी	हिना सलीम	55
	28.	पाखंडी संत	सन्दीप सिंह	56
	29.	पाठ्यक्रम परिवर्तन	सत्यभामा पाण्डेय	57
पर्यावरण लेख	30.	बढ़ते मानवीय हस्तक्षेप की सीमा एवं समस्याएं	कु. रेखा	58
व्यंग्यात्मक लेख	31.	मिठाई बनाम प्याज–टमाटर	प्रवीण कुमार श्रीवास्तव	61
लघु कथा	32.	पश्चात्ताप	अजय कुमार मिश्रा	63
	33.	यक्ष–प्रश्न	अजय कुमार मिश्रा	63
संस्मरण/यात्रा	34.	शनि षिंघ्नापुर की यात्रा	रवि शंकर	64
	35.	एक अनोखी यात्रा	अजय त्यागी	66
	36.	यात्रा–संस्मरण	रवि शंकर	69

मुख पृष्ठ : **रघुनाथ मन्दिर, उत्तरकाशी (उत्तराखण्ड)**

पार्श्व पृष्ठ : **गोपीनाथ मन्दिर (उत्तराखण्ड)**

मध्य पृष्ठ : **पर्वत श्रृंखला, चमोली (उत्तराखण्ड)**

फोटो : **महेन्द्र तिवारी**

भारतीय संदर्भ में गणतन्त्र का इतिहास

सी.एस. त्रिपाठी
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

गणतन्त्र शासन की वह प्रणाली है; जिसमें राष्ट्र के मामलों को सार्वजनिक माना जाता है। यह किसी शासक की निजी सम्पत्ति नहीं होती है। राष्ट्र का मुखिया वंशानुगत नहीं होता है। उसको प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जनता द्वारा निर्वाचित या नियुक्त किया जाता है। आधुनिक अर्थों में गणतन्त्र से आशय सरकार के उस रूप से है, जहाँ राष्ट्र का मुखिया राजा नहीं होता है। वर्तमान में, दुनिया के 206 संप्रभु राष्ट्रों में से 135 देश आधिकारिक रूप से अपने नाम के साथ 'रिपब्लिक' शब्द का प्रयोग कर रहे हैं। भारत, अमेरिका, फ्रांस और रूस जैसे आधुनिक गणतन्त्रों में कार्यपालिका को संविधान और जनता के निर्वाचन अधिकार द्वारा वैधता प्रदान की गई है।

गणतन्त्र की उत्पत्ति

मध्य युगीन उत्तरी इटली में कई ऐसे राज्य थे; जहाँ राजशाही के स्थान पर कम्यून आधारित व्यवस्था थी। सर्वप्रथम इतावली (इटली) लेखक गिओवेनी विलेनी (1280–1348) ने इस तरह के प्राचीन राज्यों को 'लिबर्टिस पापुली' (स्वतन्त्र लोग) कहा। उसके बाद, 15वीं शताब्दी में पहले आधुनिक इतिहासकार माने जाने वाले लियोनार्डो ब्रूनी (1370–1444) ने इस तरह के राज्यों को 'रेस रिपब्लिका' नाम दिया। लैटिन भाषा के इस शब्द का अर्थ है– पब्लिक अफेयर्स (सार्वजनिक मामले)। इसी से रिपब्लिक शब्द की उत्पत्ति हुई है।

सम्प्रभु राष्ट्र

इसका आशय ऐसी सरकार से है; जिसकी एक निश्चित भू–भाग में सर्वोच्च सत्ता होती है। एक ऐसा राष्ट्र होता है, जो किसी भी प्रकरण पर किसी अन्य शक्ति या देश पर आश्रित नहीं होता है। यह अन्य सभी देशों के साथ स्वतन्त्र सम्बन्ध रखने में सक्षम होता है।

प्रारम्भ

माना जाता है कि गणराज्यों की परम्परा ग्रीस के नगर राज्यों से प्रारम्भ हुई थी; लेकिन मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा की खुदाईयों से प्राप्त साक्ष्यों एवं अन्य साहित्यों के आधार पर इनके सहस्रों वर्ष पूर्व भारत वर्ष में अनेक गणराज्य स्थापित हो चुके थे। उनकी शासन व्यवस्था अत्यन्त दृढ़ थी और जनता धनधान्य पूर्ण थी। गण शब्द का अर्थ संख्या या समूह से है। इसी प्रकार,

गणराज्य या गणतन्त्र का शाब्दिक अर्थ संख्या अर्थात् बहुसंख्यक का शासन है। इस शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में चालीस बार, अथर्वेद में नौ बार और पौराणिक ग्रन्थों में अनेक बार किया गया है। वहाँ यह प्रयोग जनतन्त्र तथा गणराज्य के आधुनिक अर्थों में ही किया गया है। वैदिक साहित्य में, विभिन्न स्थानों पर किये गये उल्लेखों से यह जानकारी मिलती है कि उस काल में अधिकांश स्थानों पर हमारे यहां गणतन्त्रीय व्यवस्था ही थी। जनतान्त्रिक पहचान वाले गण तथा संघ जैसे स्वतन्त्र शब्द भारत में आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पहले ही प्रयोग होने लगे थे।

कालखण्ड :

भारत में वैदिक काल से लेकर लगभग चौथी–पाँचवी शताब्दी तक वृहद पैमाने पर जनतान्त्रिक व्यवस्था रही। इस युग को सामान्यतः तीन भागों में विभक्त किया जाता है।

पहला : 450 ईसा पूर्व – इसमें पिप्पली वन के मौर्य, कुशीनगर और काशी के मल्ल, कपिलवस्तु के शाक्य, मिथिला के विदेह तथा वैशाली के लिच्छवी थे।

दूसरा : 300 ईसा पूर्व – इसमें अटल, अराट, मालव और मिसोई नामक गणराज्यों का उल्लेख मिलता है।

तीसरा : 350 ईस्वी के सन्निकट – तीसरे कालखण्ड में पंजाब, राजपूताना और मालवा में अनेक गणराज्यों की चर्चा अध्ययन को मिलती है; जिनमें यौधेय, मालव और वृष्णि संघ इत्यादि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आधुनिक आगरा और जयपुर के क्षेत्र में विशाल अर्जुनायन गणतन्त्र था, जिसकी मुद्रायें भी खुदाई में मिली हैं। यह गणराज्य लुधियाना, दिल्ली, सहारनपुर तथा भागलपुर के बीच फैला था। इसमें तीन छोटे गणराज्य सम्मिलित थे। इससे इनका स्वरूप संघात्मक बन गया था। गोरखपुर और उत्तर बिहार में भी अनेक गणतन्त्र थे। इन गणराज्यों में राष्ट्रीय भावना बहुत प्रबल हुआ करती थी और किसी भी राजतन्त्रीय राज्य से युद्ध होने पर, ये मिलकर संयुक्त रूप से उसका सामना करते थे।

अन्य उल्लेख : कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी लिच्छवी, बृजक, मल्लक, मदक और कम्बोज आदि गणराज्यों का उल्लेख है। पाणिनी की अष्टाध्यायी में जनपद शब्द का उल्लेख अनेक स्थानों पर किया गया है; जिनकी व्यवस्था जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों में रहती थी।

ग्रीक राजदूत मेगस्थनीज ने भी क्षुद्रक, मालव और शिवि आदि गणराज्यों का वर्णन किया है। बौद्ध साहित्य में एक घटना का उल्लेख है। इसके अनुसार महात्मा बुद्ध से एक बार पूछा गया कि गणराज्य की सफलता के क्या कारण हैं? इस पर बुद्ध ने सात कारण बतलाये थे :

(i) जल्दी–जल्दी सभायें करना और उनमें अधिकाधिक सदस्यों का भाग लेना;
(ii) राज्य के कार्यों को मिल जुल कर करना;
(iii) कानूनों का पालन करना;

(iv) वृद्ध व्यक्तियों के विचारों का सम्मान;
(v) महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार न करना;
(vi) स्वधर्म में दृढ़ विश्वास रखना तथा
(vii) अपने कर्तव्यों का पालन करना।

शासन के स्वरूप

लोकतन्त्रः लोकतन्त्र के अन्तर्गत जनता की भागीदारी होती है, अर्थात् जनता का शासन होता है। इसमें नागरिक समान रूप से मताधिकार के जरिये अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं। इसका आशय राजनीतिक स्व–निर्धारण द्वारा स्वतन्त्र और समान रूप से सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक लक्ष्यों को प्राप्त करना होता है। लोकतन्त्र शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'डेमोक्रेटिका' से हुई है जिसका अर्थ जनता का शासन होता है।

कुलीन तन्त्रः कुलीन शासन (एरिस्टोक्रेसी या ओलिगार्की) में सत्ता की बागडोर कुछ ही लोगों के हाथों में केन्द्रित होती है। यह लघु समूह आभिजात्य, पारिवारिक सम्बन्ध, धन, शिक्षा, कॉरपोरेट या सैन्य नियन्त्रण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

एकाधिकारवादीः सत्ता केवल कुछ राजनीतिज्ञों के हाथों में केन्द्रित रहती है। यह प्रणाली सामान्यतः व्यक्तिवाद और स्वतन्त्रता का विरोध करती है।

सम्पन्नता का प्रतीकः प्राचीन गणतान्त्रिक भारत में समृद्धि समाज के बहुसंख्यक वर्ग तक फैली हुई थी। यद्यपि आर्थिक स्तर में अन्तर तब भी था। बावजूद इसके समाज में जागरूकता एवं अवसर की समानता अधिक थी। इसी कारण छोटे–छोटे उद्यमियों/व्यापारियों ने अपने संगठन खड़े कर लिये थे। वहाँ के नागरिकों को अपनी रुचि एवं क्षमता के अनुसार व्यवसाय चुनने की स्वतन्त्रता थी; जिससे वहाँ का समाज अपेक्षाकृत अधिक खुला था। वर्तमान में न्यूनाधिक रूप में यही दृष्टिगोचर होता है।

भारत की एकता का मुख्य आधार है एक संस्कृति, जिसका उत्साह कभी नहीं टूटा। यही इसकी विशेषता है। भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण है, क्योंकि भारतीय संस्कृति की धारा निरंतर बहती रही है और बहेगी।

– महामना मदनमोहन मालवीय

हिन्दी भाषा–एक अविरल प्रवाह

अरविन्द कुमार मिश्र
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

भाषा किसी समाज की जीवन्तता का प्रतीक होती है। यह लोगों के मध्य वैचारिक संचार का माध्यम होती है। जहाँ तक हिन्दी भाषा का प्रश्न है, यह अपने विकास के विभिन्न चरणों से गुजरते हुए आज एक परिमार्जित भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। स्वतंत्रता के पश्चात् हिन्दी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त हुआ। वर्तमान में, हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा के रूप में मान्यता हेतु प्रयास जारी है जो इसकी प्रतिष्ठा के अनुरूप ही है।

हिन्दी भाषा का प्रारम्भिक स्वरूप पाली एवं प्राकृत के रूप में पाया जाता है। विकास के अगले क्रम में, विभिन्न विद्वानों ने अपभ्रंश व अवहट्ट में जैन व नाथ साहित्य का सृजन किया। हिन्दी साहित्य के आदि काल में कवियों ने अपने आश्रयदाता राजाओं के प्रशस्ति गान के रूप में रासो साहित्य का सृजन किया जो वीर रस से ओत–प्रोत था। हिन्दी भाषा के विकास में भक्ति काल का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस काल के प्रमुख कवि तुलसीदास ने अवधी में तथा सूरदास ने ब्रज भाषा में साहित्य का सृजन किया जबकि कबीर दास ने भक्ति की निर्गुण परम्परा का निर्वहन करते हुए आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया। इस काल में हिन्दी भाषा अलंकारिक एवं रसपूर्ण स्वरूप में निखर कर सामने आयी। तुलसीदास के लिये डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन कहीं से भी अतिशयोक्तिपूर्ण परिलक्षित नहीं होता :

'कविता करके तुलसी न लसे,
कविता लसी पा तुलसी की कला।''

क्रमशः हिन्दी साहित्य का रीतिकाल श्रृंगारिक कविताओं का चरमोत्कर्ष काल था। यद्यपि इस काल की रचनाओं में आश्रयदाता राजाओं के मन बहलाव हेतु सामग्री की अधिकता थी लेकिन बिहारी जैसे कवियों की रचनाओं में श्रृंगार रस की अद्भुत अनुभूति विकसित होती है।

रीतिकाल के अवसान के बाद हिन्दी भाषा अपने पूरे प्रवाह में प्रवाहित होने लगी। पद्य साहित्य में ब्रज व अवधी के स्थान पर खड़ी बोली में रचनायें लिखी जाने लगीं। पद्य साहित्य के साथ–साथ गद्य साहित्य की सभी विधाओं का विकास होने लगा। अंग्रेजी हुकूमत से आक्रोशित जनमानस के लिये हिन्दी भाषा नव–जागरण का वाहक बन गयी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत 'भारत–दुर्दशा' व 'अन्धेर–नगरी' में भारतीयों की पीड़ा का मार्मिक दृश्य उभरता है। मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' के माध्यम से भारत के गौरवशाली अतीत का चित्र उकेरा। वहीं सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' के माध्यम से स्वतंत्रता हेतु आम जनमानस का आवाहन

किया। हिन्दी में अब उपन्यास, निबन्ध, नाटक तथा कहानी लेखन की परम्परा विकसित हो चुकी थी। हिन्दी भाषा के प्रचार–प्रसार में उपन्यास व कहानी लेखन ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया, वहीं भाषा को परिष्कृत करने में निबन्ध एवं नाटकों की अविस्मरणीय भूमिका रही। प्रेमचन्द के उपन्यास गोदान का पात्र 'होरी' किसानों की दुर्दशा का जीवन्त प्रतीक बन गया। आचार्य शुक्ल ने अपने निबन्धों के माध्यम से हिन्दी को परिष्कृत व परिमार्जित किया। इस प्रकार देश के कई भागों में सीमित प्रचलन के बावजूद हिन्दी मातृभाषा से क्रमशः राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी।

स्वतंत्रता के उपरान्त, भारत के संविधान के अनुच्छेद–343 के तहत देवनागरी लिपि की हिन्दी को राजभाषा का दर्जा प्रदान किया गया। हिन्दी के प्रचार–प्रसार एवं सरकारी कामकाज में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग हेतु सरकारी स्तर पर काफी प्रयास किये गये लेकिन ये प्रयास अंग्रेजी के प्रतिस्थापन के स्तर तक नहीं पहुँच सके हैं। फिर भी इससे हिन्दी भाषा को कमतर नहीं आंका जा सकता। हिन्दी में उत्कृष्ट साहित्य लेखन की परम्परा कायम है। हिन्दी में विशाल एवं परिष्कृत शब्द सम्पदा उपलब्ध है। हिन्दी भाषा के विकास का अगला पड़ाव इसे यांत्रिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करना था। वर्तनी में आवश्यकतानुरूप संशोधन से, हिन्दी टाइपराइटर की भाषा से कम्प्यूटर की भाषा बन चुकी है। आज कम्प्यूटर में प्रयोग हेतु हिन्दी के अनेक सॉफ्टवेयर विकसित किये जा चुके हैं।

हिन्दी भाषा अपने मूल स्वरूप में, कई विशिष्टिताओं को समाहित किये हुए है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'अवतार' शब्द को पूर्णतया परिभाषित करने के लिये 'वैश्विक भाषा' अंग्रेजी के कोष में शब्द उपलब्ध नहीं है जो इसकी विशिष्टता का द्योतक है। एक ही भाषा हिन्दी के वटवृक्ष के नीचे, हजारों बोलियाँ पल्लवित हो रही हैं। बोलियों के वैविध्य पर यह उक्ति समीचीन है :

''कोस–कोस पर बदलै पानी,
चार कोस पर बदलै बानी।''

इसके अतिरिक्त, हिन्दी भाषा यहाँ के जनमानस के स्वभाव के अनुरूप बाहरी दुनिया की क्रिया–प्रतिक्रिया के प्रति काफी ग्रहणशील है। अरबी, फारसी, उर्दू, अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं के अनेक शब्द हिन्दी की शब्द–सम्पदा के अंग बन गये हैं। यह हिन्दी की विकसनशील परम्परा के अनुरूप भी है। हिन्दी आज विश्व के अनेक देशों में बोली जा रही है। विभिन्न देशों में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों में लोगों की सहभागिता तथा विदेशों में हिन्दी फिल्मों की मांग हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता का प्रमाण है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा का दर्जा दिलाया जाना ही इस भाषा के विकास का अगला पड़ाव होगा। अंततः हिन्दी के लिये यह कथन समीचीन ही है :

''हिन्दी वह भाषा है जो विभिन्न भाषा रूपी फूलों को एक सूत्र में पिरोकर भारत के लिये एक सुन्दर हार का सृजन करती है।''

विश्व मंच पर उभरती हिन्दी

सी.एस. त्रिपाठी
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

हिन्दी के प्रचार–प्रसार को लेकर अब शोक जताने, छाती पीटने और अकारण आँसू टपकाने की आवश्यकता नहीं है। हिन्दी अपनी सीमा को लांघकर हिन्दीत्तर विश्व जगत को अपनी आभा से अचम्भित और प्रभावित करने की स्थिति में आ रही है। एक भाषा के रूप में निरन्तर यह अपने प्रतिद्वन्दियों को पीछे छोड़ती जा रही है। उदारीकरण के विगत दो दशकों में जिस तीव्रता से हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय विकास हुआ है और उसके प्रति लोगों का रुझान बढ़ा है; वह उसकी लोक प्रियता को रेखांकित करता है। विश्व में शायद ही किसी भाषा का हिन्दी की तर्ज पर फैलाव हुआ हो इसके क्या कारक हैं, यह विचार–विमर्श एवं शोध का विषय है। हिन्दी को नया मुकाम देने का कार्य कर रही संस्थायें, शासकीय तन्त्र तथा छोटे–बड़े समूह इसका श्रेय लेने का प्रयत्न अवश्य कर रहे हैं। यह त्रुटिपूर्ण भी नहीं है क्योंकि उपयोग कर्ताओं के दृष्टिकोण से 1952 में हिन्दी विश्व में पांचवें स्थान पर थी। 1980 के दशक में वह चीनी और अंग्रेज़ी के बाद तीसरे पायदान पर आ गई। आज विश्व मंच पर इसकी लोकप्रियता लोगों के सिर चढ़कर बोल रही है और चीनी भाषा के बाद दूसरे पायदान पर है। भविष्य, राजभाषा हिन्दी का ही है। आने वाले दिनों में चीनी भाषा को दौड़ में पछाड़कर, हिन्दी, शीर्ष पर आने का गौरव प्राप्त कर ले तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

वे सभी संस्थायें और समूह निश्चय ही इसके लिए साधुवाद के पात्र हैं जो हिन्दी के उन्नयन, विकास एवं प्रचार–प्रसार के लिए सक्रिय हैं लेकिन इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि बाजार ने हिन्दी की स्वीकार्यता को नई ऊँचाई दी है और विश्व को आकर्षित किया है। यह सार्वभौमिक सत्य है कि जो भाषायें रोजगार और संवादपरक नहीं बन पातीं उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। मैक्सिको की पुरातन भाषाओं में से एक अयापनेको, यूक्रेन की कैरेम, ओकलाहामा की विचिता तथा इण्डोनेशिया की लेंगिलू भाषा आज अगर अपने अस्तित्व के संकट से गुज़र रही हैं तो उसके लिए उनका रोज़गारपरक और संवादविहीन होना मुख्य कारक है। एक अनुमान के अनुसार विश्व भर में लगभग 6900 मातृभाषायें बोली जाती हैं। इनमें से लगभग 2500 मातृभाषायें अपने अस्तित्व के संकट से गुज़र रही हैं। इनमें से कुछ को चिन्ताजनक स्थिति वाली भाषाओं की सूची में रख दिया गया है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा कराये गये एक तुलनात्मक अध्ययन में यह खुलासा हुआ कि 2011 में विलुप्तप्राय मातृभाषाओं की संख्या, जो 900 के आसपास थी वह आज तीन गुने से पार जा पहुँची है। उल्लेखनीय है कि विश्व में

लगभग 200 ऐसी मातृभाषायें हैं जिनके बोलने वालों की संख्या मात्र दस–बारह रह गयी है। यह चिंताजनक स्थिति है।

दूसरी ओर अगर वैश्विक भाषा अंग्रेजी के फैलाव की बात करें तो निःसंदेह उसके अनेक कारण हो सकते हैं, लेकिन वह अपने शानदार संवाद तथा व्यापारिक दृष्टिकोण के कारण भी अपना विश्वव्यापी चरित्र गढ़ने में सफल रही है। आज हिन्दी भाषा भी उसी चरित्र को अपनाती दिख रही है। वह विश्व संवाद की एक सशक्त भाषा के रूप में उभर रही है और विश्व समुदाय उसका स्वागत कर रहा है। कभी भारतीय ग्रन्थों, विशेष रूप से संस्कृत भाषा की गम्भीरता और उसकी उपादेयता तथा संस्कृत कवियों व साहित्यकारों की साहित्यिक रचना की मीमांसा करने वाला यूरोपीय देश जर्मनी संस्कृत भाषा को लेकर आत्म मुग्ध हुआ करता था। वेदों, पुराणों और उपनिषदों को जर्मन भाषा में अनुदित कर साहित्य के प्रति अपने अनुराग को संदर्भित करता था। आज वह संस्कृत की तरह हिन्दी को भी उतनी ही महत्ता देते देखा जा रहा है। जर्मनी के लोग हिन्दी को एशियाई आबादी के एक बड़े तबके से सम्पर्क साधने का सबसे दमदार हथियार मानने लगे हैं। जर्मनी के हाई डेलवर्ग, लोअर सेक्सोनी के लाइपंजिंग, बर्लिन के हम्बोडिट और बॉन विश्वविद्यालय के अतिरिक्त विश्व की कई शिक्षण संस्थाओं में अब हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर ली गई है।

छात्र समुदाय इस भाषा में रोजगार की व्यापक सम्भावनाएं भी खोजने लगा है। एक आंकड़े के अनुसार विश्व भर के 150 विश्वविद्यालयों और कई छोटे–बड़े शिक्षण संस्थानों में शोध स्तर तक अध्ययन–अध्यापन की पूरी व्यवस्था की गई है। यूरोप से ही लगभग दो दर्जन पत्र–पत्रिकायें हिन्दी में प्रकाशित होती हैं। सुखद यह है कि पाठकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। एक सर्वेक्षण के अनुसार आज विश्व में लगभग 50 करोड़ लोग हिन्दी बोलते हैं और एक अरब लोग अच्छी तरह समझते हैं। वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा तथा बाज़ार ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बचा है, जहाँ हिन्दी अपने पाँव पसारती न दिख रही हो। वैश्वीकरण के वातावरण में अब हिन्दी विदेशी कम्पनियों के लिए भी लाभ की एक आकर्षक भाषा व ज़रिया बन गई है। उन्हें अपने उत्पादों को बड़ी आबादी तक पहुँचाने के लिये हिन्दी को अपना माध्यम बनाना रास आ रहा है यानी पूरा कॉरपोरेट कल्चर ही अब हिन्दीमय होता जा रहा है। विश्वमंच पर उभरती हिन्दी से उत्साहित सरकारी संस्थायें भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार में प्रयत्नशील हैं। हिन्दी भाषा के विकास और उसके फैलाव के लिये यह शुभ संकेत है।

विकसित भारत का बिखरता समाज

अजय कुमार मिश्रा
लेखापरीक्षक

जैसे–जैसे हम विकास कर रहे हैं हमारा समाज बिखर रहा है। क्या इसलिए कि वह विकास की ओर अग्रसर है या इसलिए कि मध्यवर्ग बढ़ा है, और उसकी आय में इजाफा हुआ है? समाज का एक बड़ा हिस्सा निम्न मध्यवर्ग से उठकर मध्यवर्ग में आ गया है। उसकी आकांक्षाएं बढ़ी हैं, जो अब भी निम्न आर्थिक स्थिति के चक्र में फंसा है, वह नाराज और कुंठित है। महंगाई ने उस नाराजगी को अधिक हवा दी है। माना जा रहा है कि फुटकर बाजार क्षेत्र में विदेशी हिस्सेदारी से लाखों लोग बेरोजगार हो जायेंगे, महँगाई और बढ़ेगी।

कई बार यह सवाल उठता है कि क्या नैतिक मूल्य अप्रासंगिक हो गये हैं। सत्ता असामान्य को सामान्य मानकर पेश करती है। जो नदियां बचपन में निर्मल थीं तब वे हमारे लिए उज्जवल थीं, और जब प्रदूषित हैं तो भी वे नदियां ही हैं। पहले लोगों का सामाजिक नज़रिया था, वे गंगा और अन्य नदियों के प्रति एक सामाजिक नज़रिया रखते थे। नदियों के किनारे बसे लोगों तथा यात्रियों की, गंगा या अन्य नदियों की सेवा, जीवन का अंग थी। वे साबुन से नदियों में नहाने को बुरा समझते थे उनके लिए कोई भी अपवित्र वस्तु प्रवाहित करना एक तरह से वर्जित था, सिवाय अन्तिम संस्कार से संबंधित उच्छिष्ट के या देवार्चना के बाद उतरे फूलों आदि के। लेकिन आजादी के बाद का नज़रिया बदल गया। नदियों के जल को वे मात्र ऐसा जल समझने लगे, जिसमें गंदगियां बहाकर अपने आपको स्वच्छ रख सकते हैं। गंगा का ही उदाहरण लें, तो हर की पौड़ी पर पानी लाने के लिए महामना मालवीय जी के नेतृत्व में जो आंदोलन हुआ था, उसका आधार धार्मिकता के साथ सामाजिक दायित्व का निर्वाह भी था।

ब्रिटिश सरकार के आदेश के खिलाफ सारे रजवाड़ों और समाज के मैजिज लोगों का इकट्ठा होना और हर की पौड़ी पर जल को आने से रोकने का विरोध राजनैतिक आंदोलन कतई नहीं था, बल्कि एक सामाजिक दायित्व का निर्वहन था। अब इस रूप में सामाजिक प्रतिरोध बंद हो गए। समाज में नैतिक मूल्यों की गिरावट का उदाहरण प्रायः बसों या अन्य सामाजिक स्थानों पर देखने को मिल जायेगा, पहले हम बड़े बुजुर्गों एवं महिलाओं के सम्मान में अपना स्थान छोड़ देते थे, परन्तु अब ऐसा नहीं करते, हम समाज की अच्छाईयों को छोड़ते जा रहें है, विकास की अंधी दौड़ में, हर चीज का बाजारीकरण एवं राजनीतिकरण हो गया। पानी हो, पहाड़ या हवा हो, जंगलों और जनजातियों का दोहन और दलन अविकल रूप से हो रहा है।

माओवादियों का हिंसक हस्तक्षेप जनजातियों के अधिकारों के संरक्षण के बहाने बढ़ते जाना एक तरह की दण्डनात्मक राजनीति है। चाहे महँगाई हो या औद्योगिकीकरण, सबका उद्देश्य है चंद लोगों या वर्गों का लाभ। शिक्षा की भी यही स्थिति है। शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान का विकास न होकर पैकेज की दौड़ या अपनी तिजोरियां भरना है, प्राइवेट व्यावसायिक शिक्षा संस्कार चलाने वाले बहुत से लोग सामान्य स्थिति से उठकर अरबपति और करोड़पति हो गए। शिक्षा की कई श्रेणियां बन गई हैं। जो स्कूल भाषाई हैं, उनमें से सामान्यतः बाबू किस्म के लोग निकलते हैं या फिर प्रथम श्रेणी के अधिकारी। अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों से बड़े बाबू, मझोले दरजे के अधिकारी या इस तरह के लोग निकलते हैं जो बड़े संस्थानों जैसे आई.आई. टी. व्यावसायिक संस्थानों की जरूरत की पूर्ति करते हैं। जो बहुत मेधावी नहीं होते, उनके लिए आई.टी.आई. या मझोले इंजीनियरिंग और व्यावसायिक संस्थान जरूरत को पूरा करते हैं। वे कुकुरमुत्ते की तरह फैल रहे हैं। लाखों रुपये कैपिटेशन फीस देकर मां–बाप अपने बच्चों को इंजीनियर या बिजनेस मैनेजमेंट एक्सपर्ट बनाने की आकांक्षा पूरी करते हैं, भले ही वे बाद में, सेल्समैन बनें। बचपन से वे उन्हें सिखाते हैं कि वे इंजीनियर बनें, प्रबंधन में जाएं, आई.ए. एस. बनें।

सपने देखना अच्छी बात है, पर सपने थोपना खतरनाक होता है। जब वे दिखाए गए सपनों के अनुरूप नहीं बन पाते, तो जीवन भर के लिए हीनता की नाव में सवार होकर डूबते–उतरते रहते हैं। धनी बनने की जिस लालसा के बीज उनके मन में बोए गए थे, उसको वे रिश्वत लेकर या दहेज के लोभ में पत्नी पर अत्याचार ढाकर पूरा करते हैं। कई बी.टेक पास बाइक लिफ्टिंग और चोरी–चकारी करते हैं। उनकी पूरी न होने वाली अपूर्ण इच्छाएं रोपे गए बम की तरह ऐसी विस्फोटक बनने लगती हैं कि सब कुछ तहस–नहस हो जाता है। युवा वर्ग छोटे काम करने में अपमान समझता है, लेकिन नशेबाजी, चोरी–चकारी और हत्या करके जेल काटने में शहादत का मज़ा लेता है। कुछ लोगों का मानना है कि जब देश का विकास होता है, तो वह संक्रमण काल होता है। अमेरिका में ऐसा ही हुआ। आज भी वहां अश्वेत नागरिक हवाई अड्डों और रेलवे स्टेशन के बाहर चाकू या बन्दूक दिखाकर वसूली करते हैं। ऐसा न हो कि यह विकास हमारे देश को भी यह रवायत दे जाए, क्योंकि यहां मध्यवर्ग बढ़ रहा है, गरीबों की आबादी भी बढ़ रही है। यह कश्मकश क्या रूप लेगी, इसका अंदाजा ही लगाया जा सकता है। विकास के नाम पर क्या हम इस ओर से लापरवाह हो सकते हैं। हमे नैतिक शिक्षा एवं नैतिक मूल्य और उज्ज्वल चरित्र के निर्माण की ओर ध्यान देना चाहिए।

क्या लिखूं

अशोक कुमार
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

प्रयास के लिए कुछ लिखना चाहता हूँ, पर क्या लिखूं समझ नहीं आ रहा है। विषय कई हैं पर कोई भी जम नहीं रहा है। लिखने के लिए सबसे बड़ी समस्या यही है कि क्या लिखा जाए। किस विषय पर लिखा जाए। आजकल दुनिया में इतनी समस्यायें हैं और उनके उतने ही हल हैं। पर कई बार जब हल मिल जाता है तो फिर याद ही नहीं रहता कि समस्या क्या थी। अभी तो मेरी समस्या यही है कि क्या लिखूं। लिखने के लिए कई विकल्प हैं पर चुनना सबसे कठिन काम है। वैसे भी जब किसी वस्तु के हमारे पास बहुत से विकल्प हों तो यह बहुत ही अच्छा रहता है पर यही समस्या है कि जब हमारे पास बहुत विकल्प हों तो हम चुनने में उतनी ही परेशानी का अनुभव करते हैं। उदाहरणार्थ जब केवल दूरदर्शन का जमाना था तो लोग उसे बड़े ध्यान से देखा करते थे। उस जमाने में वही मनोरंजन का एकमात्र विकल्प था और लोगों के लिए वही आनंद का स्रोत था। उस जमाने में जिस किसी के पास मात्र ब्लैक एंड व्हाइट टेलीविजन भी हुआ करता था, उसे अपने आस–पड़ोस में बहुत बड़ा आदमी समझा जाता था। आस–पड़ोस के बच्चे तो क्या बड़े–बूढ़े भी उसके घर पर आकर कतारबद्ध हो टेलीविजन के सामने बैठ जाते थे। जब रामायण और महाभारत धारावाहिक आया करते थे तो धार्मिक लोग उन धारावाहिकों के पात्रों को हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक नमन किया करते थे।

आज तो लगभग हर घर में केबल टीवी और रंगीन टेलीविजन पहुंच चुका है। अब इतने चैनल और इतने प्रोग्राम उपलब्ध हैं कि लोग उनको देखकर उकता चुके हैं। सास–बहू टाइप सीरियल तो दर्शकों को अच्छी तरह पकाकर ही बंद होते हैं। रियल्टी प्रोग्राम भी उबाऊ हो चुके हैं। कई बार तो टीवी देखना इतना बोरियत भरा हो जाता है कि रिमोट से केवल चैनल को बार–बार बदलना ही काम रह जाता है। मुझे अपने मित्र पाण्डे जी को देखकर तो लगा कि महाशय शायद वीडियो गेम खेल रहे हैं। मैने पूछा तो बोले कि ''भाई क्या करें कुछ समझ नहीं आ रहा है कि क्या देखें। वैसे भी ढ़ेर सारे विज्ञापनों के बीच प्रोग्राम बचा ही कितना रहता है? लगता है कि विज्ञापन दिखाने के लिए थोड़ा सा प्रोग्राम दिखा दिया जाता है।'' मित्र की बात सही है। ये विज्ञापन केवल प्रलोभनों और झूठे सब्जबाग दिखाकर लोगों की इच्छाओं और वासनाओं को प्रज्वलित करने का ही काम करते हैं। टेलीविजन पर नित नई चीजों के विज्ञापन लोगों को खरीददारी के लिए प्रोत्साहित करते हैं। बाजार में नित नई–नई और भिन्न–भिन्न प्रकार की वस्तुएं आ रही हैं। नित नई–नई कारों, मोटर साइकिलों, वस्त्रों, इलैक्ट्रॉनिक सामानों आदि भोग विलास की सामग्री से बाजार अटा पड़ा है। ऐसे ही हर रोज नित नये ब्राण्डों के

मोबाइल फोन बाजार में आ रहे हैं। कई बच्चे और नवयुवक तो लगभग हर महीने ही नया मोबाइल और गैजेट्स बदल देते हैं। कई बार तो बिना यह जाने कि जो नया गैजेट है, क्या वह उनके किसी काम का है भी या नहीं, लोग उसे खरीद रहे हैं।

वैसे जमाना ही बदलाव का है। जब प्रेमी–प्रेमिका भी रोज बदले जा सकते हैं तो फिर ये इलेक्ट्रॉनिक खिलौने किस खेत की मूली हैं। नवधनाढ्यों के पास तो नित नई कारें, मोबाइल, कपड़े और प्रेमिकायें देखी जा सकती हैं। यह सब उपभोक्तावाद या कहें कि बाजारवाद की देन है। बाजारवाद ने आज हमारे पास ढ़ेर सारे विकल्प दे दिये हैं। अगर आपके पास धन नहीं है तो क्या हुआ? वे आपको लोन दिला देंगे। क्रेडिट कार्ड देने के लिए बैंक आपको खुद फोन कर के ललचा रहे हैं। अन्यान्य चीजों के लिए आपको कभी भी कॉल की जा सकती है। कभी–कभी तो किसी अति उत्साहित टेलीकॉलर को सुनकर यह लगता है कि शायद बेचारा हमारे पिछले जन्म का कर्ज चुकाने के लिए इतना प्रयास कर रहा है। पर लगता तो ये है कि यदि हमने उसका उत्पाद या सेवा स्वीकार नहीं की तो हमें भी अपनी मुक्ति के लिए भटकना पड़ेगा। चार्वाक का, ऋण लेकर भी घी पीने का दर्शन, सर्वत्र व्याप्त हो गया है। बस अंतर इतना है कि अब ऋण देने वाले स्वयं ऋण देने के लिए पीछे–पीछे आते हैं।

बाजार योजनाबद्ध तरीके से हमारे मन को अपने मायाजाल में जकड़ लेता है। हमारे एक मित्र एक बार शहर के एक भव्य शोरूम के पास से गुजर रहे थे। उस शोरूम के बाहर बड़े–बड़े अक्षरों में लिखा था ''यहां शादी का हर सामान मिलता है।'' वे पढ़कर बड़े प्रसन्न हुए। फिर क्या था, हमारे मित्र उस शोरूम में घुस गये। सैल्समैन ने उनसे उनकी जरूरत के बारे में पूछा तो वे बोले कि ''आपके यहां तो शादी का हर सामान मिलता है तो फिर मुझे पहले शादी के लायक लड़की दिखा दीजिये, सामान तो बाद की चीज है।'' अब वेचारा सैल्समैन भी क्या जबाव देता। कन्या भ्रूणहत्या में प्रथम स्थान पर रहने वाले, हमारे देश में हमारे मित्र की शादी करने की इच्छा तो अभी तक पूरी नहीं हुई है, पर बाजार हर जरूरत पूरी करने का आश्वासन अवश्य देता है। हमारे सीधे–सादे मित्र की इच्छा भी जरूर पूरी होगी। वैसे भी इंटरनेट के जमाने में कुछ भी हो सकता है।

बाजार का काम तो केवल बेचना और मुनाफ़ा कमाना है। यह तो मनुष्य के ऊपर है कि वह इस मकड़जाल से बच पाता है कि नहीं। लेकिन इससे बचना आसान नहीं है। बाजारवाद सबसे पहले तो यही एहसास कराता है कि आपके पड़ोसी की कमीज़ आपकी कमीज़ से ज्यादा सफेद क्यों है। आपकी कार आपके पड़ोसी की कार से छोटी क्यों है। वह व्यक्ति को हीनभावना का शिकार बना देता है। वह आत्मसंतुष्टि को कर्महीनता बताता है। आजकल शांत स्वभाव वाले को लूज़र कहा जाता है। फिर कोई भी क्यों पीछे रहना चाहेगा। उसे चाहे कर्ज लेना पड़े, चोरी करनी पड़े, डाका डालना पड़े, कालाबाजारी, घूसखोरी, चमचागिरी करनी पड़े, वह करेगा। आखिर जब तक अपनी कार पड़ोसी की कार से बड़ी न हो जाये तब तक तो बीवी–बच्चे भी तो चैन से नहीं रहने देंगे। इस तरह बाजारवाद हमें हमारी इच्छाओं का दास बना रहा है।

मन इतना भटक रहा है कि किसी भी एक वस्तु पर टिक नहीं पा रहा है। एक वस्तु कुछ ही दिन अच्छी लगती है फिर मन उससे उकताने लगता है, किसी नई वस्तु, किसी नये एडवेंचर की तलाश करने लगता है। इस नवीनता को भोगने के लिए धन की परम आवश्यकता होती है। साम, दाम, दंड और भेद हर नीति से केवल धनोपार्जन करने के लिए मनुष्य जुट जाता है। जब येन–केन प्रकारेण मनुष्य धनोपार्जन को ही लक्ष्य बना लेता है, तब उसकी गति कोल्हू के बैल की तरह हो जाती है, जो केवल एक चक्कर में ही घूमता रहता है और कहीं भी नहीं पहुंच पाता है। आज मानव के लिए मात्र भौतिक इच्छाओं की पूर्ति ही जीवन का उद्देश्य बन गया है। लेकिन सुखी जीवन जीने का रहस्य भौतिक इच्छाओं की पूर्ति से कहीं अधिक है।

इस बात पर मुझे एक कथा याद आ रही है। एक मछुआरा था जो प्रतिदिन केवल उतनी ही मछलियां पकड़ता था, जितने में उसका रोजमर्रा का खर्चा चल जाता था। एक दिन उसे एक व्यापारी मिला। उसने मछुआरे से कहा कि वह इतनी कम मेहनत करके अपना जीवन व्यर्थ ही बरबाद कर रहा है। उसे चाहिए था कि वह अधिक मेहनत करे और अधिक मछलियां पकड़े। इस पर मछुआरे ने उससे पूछा कि अधिक मेहनत करने से क्या होगा। व्यापारी को उसकी बुद्धि पर दया आयी और उसने उसे समझाते हुए कहा कि जब वह अधिक मेहनत करेगा तो उसके पास धन जमा हो जायेगा, जिससे वह एक बड़ी नाव खरीद सकता है। जब उसके पास बड़ी नाव हो जायेगी तो वह अधिक मछलियां पकड़ सकेगा और जिन्हें बेचकर वह और अधिक धन कमा सकेगा। फिर उसके पास नौकर–चाकर होंगे और हर तरह की शानौशौकत उसके पास होगी। इस पर मछुआरे ने व्यापारी से पूछा कि यह सब पाकर क्या होगा। व्यापारी को गुस्सा आ गया और बोला, 'अरे मूर्ख तू उससे सुखी जीवन बिताऐगा।' उसकी बात सुनकर मछुवारे ने कहा, 'महाशय इतनी मेहनत करके के बाद मुझे सुखी जीवन मिलेगा? मै अभी सुखी जीवन ही तो बिता रहा हूँ।'

वास्तव में केवल सोच का ही अंतर है। कोई रूखी–सूखी खाकर भी सुखी है और कोई रात–दिन इस आशा से मेहनत कर रहा है कि शायद सुखी जीवन बिता सके। अगर केवल सुख की तलाश ही की जाए तो वह केवल 'कस्तूरी कुंडल बसे' की उक्ति को ही चरितार्थ करना होगा। जीवन को सुखमय बनाने के लिए बहुत से विकल्पों को अपने पास रखने के बजाए किसी एक, लेकिन सही, विकल्प को चुनना आवश्यक है। खैर मैं तो अभी तक लिखने के लिए कोई सही विकल्प नहीं चुन पाया हूँ। कोई बात नहीं है। बाहर बारिश हो रही है। मौसम बहुत ही सुहावना हो गया है। ऐसे सुहाने मौसम में आज रात के खाने–पीने की कुछ विशेष व्यवस्था करनी पड़ेगी, क्योंकि मौसम का तकाज़ा ही ऐसा है। मैं 'प्रयास' में लिखने के लिए उपयुक्त विषय चुनने के लिए प्रयासरत हूँ। यदि किसी सज्जन के पास ऐसा कोई उपयुक्त विषय हो तो, मेरा उनसे अनुरोध है कि वे इस सम्बन्ध में मेरी सहायता अवश्य करें।

दशहरा मेला

अश्विनी कुमार पाण्डेय
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

उस दिन सुबह मैं जब जागा तो मुझे अत्यन्त खुशी थी कि आज दशहरा है और मैं आज दशहरा मेला देखने जाउँगा। सुबह से ही मैंने अपने सारे कार्यक्रम तय कर लिये थे कि किस समय निकलना उचित होगा और किस प्रकार दशहरा मेला देखने जाना है। शाम को तय कार्यक्रम के अनुसार जब मैं तैयार होकर दशहरे का मेला दखने निकला था, तो शान्त था, मन में उल्लास था कि आज फिर वही बचपन की यादें लेकर लौटूँगा। वही बाँसुरी, वही मिट्टी के खिलौने, वही लाल पन्नी वाले चश्मे, वही भूसे वाली कागज से बनी गुड़िया, और रामदाना बेचते लोग नजर आयेंगे। लौटते वक्त उन खिलौनों को लेकर बच्चों को लौटते देखना कितना सुखद होगा, मैं बयान नहीं कर सकता। कुछ बच्चे अपने माता–पिता का हाथ पकड़कर जाते हुए खाने की चीजें देखकर ललचा रहे होंगे तो कुछ उनको पाकर उल्लास से शोर मचा रहे होंगे। आज बड़े दिनों के बाद मुझे दशहरा मेला देखने का मौका मिलेगा लेकिन बचपन में वाराणसी के रामनगर में देखे गये दशहरे के मेलों की झांकियाँ मुझे आज तक याद हैं।

मुझे लगा जैसे सब कुछ वैसा ही होगा वही अप्रतिम सुन्दरता से मुग्ध कर देने वाले राम, अद्वितीय सुन्दरता की छवि प्रस्तुत करने वाली सौम्य और शान्त सीता, कुछ उद्विग्न, कुछ तेज, कुछ चंचल परन्तु फिर भी अजीब लावण्य से भरे वही लक्ष्मण होंगे, वही भक्ति से सराबोर रामरस में डूबे हनुमान होंगे और वही क्रोध से भयंकर डरावनी छवि वाला अहंकार से भरा हुआ रावण, शायद जिसका मुख अहंकार अथवा क्रोध के कारण अथवा किसी अन्य कारण से ही परन्तु अति प्रज्वलित और शोभा युक्त वही दशानन देखने को मिलेंगे। इन्हीं भावनाओं में बहता हुआ मैं जाने कब क्रीड़ा मंडल में पहुँच गया, पता भी नहीं चला। मेरी सारी भावनाओं व यादों को धूमिल होने में ज्यादा वक्त नहीं लगा, वहाँ कुछ भी वैसा नहीं था जैसा मैंने सोचा था सब कुछ यन्त्रवत सा लगा। यहाँ तक कि जो लोग वहाँ मेला देखने आये थे वो भी यन्त्रवत ही लगे।

ऐसा प्रतीत ही नहीं हो रहा था जैसे वो अपनी इच्छा से यहाँ आये हों, लग रहा था जैसे कोई शक्ति उन्हें यहां खींच लायी हो और जैसे ही यह मोहजाल टूटेगा सब दौड़कर घर की तरफ भाग जायेंगे। ऐसा लग रहा था जैसे यन्त्रवत शक्तियों ने सबके चेहरों को मलीन कर दिया हो, चँहुओर तेज जनरेटरों के चलने की गड़गड़ाहट थी, परन्तु वह आमोद और उल्लास नहीं था जिसकी मैंने कल्पना की थी। रावण भी वैसा नहीं था जैसी मैंने कल्पना की थी, बस एक पुतला खड़ा था जिसे देखकर यह लग रहा था जैसे वह अपने पूर्व में किये गये कृत्य पर

पछता रहा हो तथा एक बार जिसकी सजा मिल जाने के बाद भी उसी कृत्य के लिए उसे बार–बार जलना पड़ता है। फिर तेज आतिशबाजी और शोर के बीच वह घड़ी भी आ गयी, जब रावण के पुतले को जला दिया गया और पुतले वाला वही रावण, जिसका मुख अजीब सी बेचैनी और परेशानी से भरा दिख रहा था, और पश्चात्ताप से भरा प्रतीत होता था तथा वह स्वयं जैसे जलने के लिए तैयार था, जलकर पलभर में ही नष्ट हो गया और भूमि में मिल गया। लोगों में रावण के जल जाने का अजीब सा उल्लास नज़र आया, लोग तालियां बजाकर इसका स्वागत कर रहे थे।

रावण जल चुका था, रावण के जलने से जो सहसा प्रकाश उठा था, उसके बन्द हो जाने से बत्तियों के जलने के बावजूद सब ओर अन्धेरा ही अन्धेरा हो गया था, जैसे किसी बेगुनाह को मार दिये जाने पर सब ओर स्यापा छा जाता है। फिर सारे लोग अपने घर जाने के लिए तैयार थे और बड़ी जल्दी में लग रहे थे, शायद उनका मन वहाँ था ही नहीं इसलिए। भीड़ के रेलम–रेल में एक–दूसरे को धक्का देते हुये, घर पहुँचने के लिए बेचैन, उस छोटे से क्रीड़ा स्थल से बाहर आ रहे थे। मुझे लग रहा था जैसे यहां आकर भी लोग आधुनिक दुनिया की भागदौड़ से दूर नहीं हो पाए थे, वही प्रतिस्पर्धा, एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की वही चाह जिसके लिए चाहे जो भी करना पड़े, चाहे उसके लिए किसी को पैरों तले कुचलना ही क्यूं न पड़े, लोग एक–दूसरे को ढकेलते धक्का देते आगे बढ़ रहे थे। बच्चे थोड़े उत्साहित जरूर थे, लेकिन वो रावण के मरने के कारण अथवा रावण के पुतले के जल जाने के कारण नहीं केवल आतिशबाजी की अनुपम छटा को देखकर अथवा पास के ठेलों से कुछ खाने की चीजें अथवा ठेलों पर बिकने वाले तलवार और गदा वालों से तलवार अथवा गदा खरीदकर खुश थे।

सब वापस जा रहे थे, मैं भी वापस लौटने के लिए तैयार था और अनमने ढंग से वापस आ रहा था, शायद इसका कारण यह था कि मैंने जो सोचा था, कुछ भी वैसा नहीं था अथवा कुछ और मैं बता नहीं सकता। लेकिन मेरे मन में एक अजीब सा अन्तर्द्वन्द चल रहा था कि रावण तो महाज्ञानी, प्रकाण्ड विद्वान, त्रिकालदर्शी और भगवान शिव का अनन्य भक्त था। यह जरूर था कि उसको अपने पराक्रम और अपने बलशाली और विश्वविजेता पुत्रों पर अभिमान हो गया था, और वह अपने जैसा बलशाली पृथ्वी पर किसी और को नहीं समझता था तथा इसी घमण्ड में चूर होकर उसने शास्त्रों के विरुद्ध सीता माता का हरण कर लिया था। जहां तक मुझे पता है और मेरा ज्ञान है रावण के नैतिक पतन की उपरोक्त के अलावा कोई और घटना नहीं है। सीता हरण के लिए पुरुषोत्तम राम ने उसे दण्ड दे दिया था और पूरे कुल सहित उसका सर्वनाश कर दिया था। लेकिन बेचारे रावण को आज तक जलाया जाता है और भला क्यों, क्योंकि वह बुराई का प्रतीक है और लोगों को उसको जलता देखकर बुराई त्यागने की प्रेरणा मिलेगी। लेकिन क्या वास्तव मे ऐसा है? क्योंकि यदि ऐसा होता तो हम सदियों से रावण जलाते आ रहे है और उसको जलता देखकर लोगों ने बुराई त्याग दी होती और दुनिया से बुराई का नामोनिशान मिट चुका होता।

अब मेरे मन के अन्तर्द्वन्दों ने मुझे और बेचैन कर दिया कि जिस प्रतीक को बार–बार जलाया जाता है उसका हमारे चरित्र पर क्या प्रभाव हो रहा है। हम हर साल दशहरा बड़े उल्लास से मनाते हैं फिर भूल जाते हैं, फिर उसी दुनिया की भागदौड़ में खो जाते हैं, वही सारे कृत्य, जो ना तो नैतिक रूप से उचित होते हैं और ना ही सामाजिक रूप से ही, हम रोज करते हैं। हमारे देश की दुर्व्यवस्था में आज हजारों रावण खड़े हो गये हैं। यदि यह सम्भव होता कि वह रामचन्द्र युगीन रावण कहीं से फिर पृथ्वी पर अवतरित हो पाता तो आज वह अपने पुतले के जलाये जाने का जरूर विरोध करता और अपने पराक्रम से अथवा धनबल से जरूर स्वयं अपने को और अपने पुतले को जलाये जाने से बचा ले जाता। मेरे विचार से यह उचित भी होता, क्योकिं हमारे देश में आज रावणों की कोई कमी नहीं है। रोज ही यहां महिलाओं की अस्मत से खेला जा रहा है, रोज ही देश की सम्प्रभुता और अखण्डता को नष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है, लोगों का नैतिक पतन इतना हो गया है कि रावण स्वयं ही शर्मसार हो जाये, नैतिक पतन के कारण लोगों में सत्ता लोभ बढ़ गया है और सत्ता के लिए लोग न जाने कितने छद्मरूप धरे घूम रहे हैं, हर तरफ गरीबी और बेरोजगारी है फिर भी बहुत सारे रावण देश को लूटने में लगे हैं तथा देश की मर्यादा से खिलवाड़ कर रहे हैं।

अतः यह तर्कसंगत होगा कि पहले अपने अंदर के रावण को मारा जाये तब कहीं जाकर रावण के पुतलों को जलाया जाना चाहिये, क्योंकि हमें यह तनिक भी अधिकार नहीं है कि किसी दूसरे पर ऐसी नैतिकता थोपी जाये जिसका निर्वाह हम स्वयं नहीं कर पा रहे हैं। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि रावण को जलाने का तथा रावण को जलते देखने का अधिकार केवल उन लोगों को होना चाहिए जिन्होनें अपने अन्दर के रावण को जला दिया हो और अपने अन्दर नैतिकता की परमज्योति जला ली हो। अन्यथा केवल अपने मनोरंजन और शौक के लिए बार–बार रावण जैसे पौराणिक व्यक्ति को बुराई का प्रतीक बनाकर जलाया जाना बन्द कर दिया जाना चाहिए।

प्यार करना, स्नेह लुटाना मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्य है। जो कुछ तुम सहर्ष उदारतापूर्वक दोगे, वह अप्रत्याशित तरीकों से तुम्हारे जीवन को समृद्ध कर जाएगा।

– ईसा मसीह

नारी सशक्तीकरण - हकीकत या वहम

कु. रेखा
कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

प्राचीन काल से प्रचलित कथन जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं, की जाँच–पड़ताल आज के युग में की जाए तो उपरोक्त का विपरीत कथन होगा–जहाँ नारी की पूजा नहीं होती है, वहाँ दैत्य निवास करते हैं। और आज यह कथन चरितार्थ भी हो रहा है। समय बदला है, परिस्थितियाँ बदली हैं, यहाँ तक कि नर और नारी भी बदले हैं। जो पहले से ही सशक्त, सबल और सक्षम है उसके लिए सशक्तीकरण के प्रयास किसलिए ....? आज चहुँओर नारी को सशक्त करने के स्वर सुनाई पड़ते हैं। मुद्दा यह है कि ईश्वर की बनाई समान सृष्टि के दो मनुष्य रूप–स्त्री और पुरुष हैं तो हम पुरुष सशक्तीकरण की बात क्यों नहीं करते हैं। क्यों स्त्रियों को सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक रूप से मज़बूत बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं?

यदि हम वैदिक काल से भी पूर्व हड़प्पा सभ्यता को देखें तो वहाँ हमें मातृसत्तात्मक परिवारों के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं, जिसका अर्थ है कि उस समय परिवार की मुखिया नारी होती थी। फिर वैदिक काल में भी हमें अनेक ऐसी महिलाओं के साक्ष्य प्राप्त होते हैं, जो ऋषियों–मुनियों से भी अधिक मेधाविनी व तेजस्विनी थीं। गार्गी, विदुषी, लोपामुद्रा, घोषा आदि महिलाएँ अत्यंत प्रखर बुद्धि थीं। गार्गी और याज्ञवलक्य संवाद में गार्गी ने याज्ञवलक्य को पराजित किया था, जिसके प्रमाण हमारे वेदों में मिलते हैं। तभी से विद्वानों ने महिलाओं के लिए ऐसे नियम–कायदे गढ़े, ऐसी बेड़ियाँ बनाई हैं, जो इतने प्रयासों के बावजूद भी आज टूटने का नाम नहीं ले रही हैं। उन पुरूषों को, जिन्होंने शास्त्रों, वेदों, उपनिषदों, आरण्यकों को रचा है, पहले ही यह भान हो चुका था कि स्त्री हमसे आगे निकल जाएगी तो हमें कौन जानेगा।

हालांकि स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था को प्राचीन काल में महत्व दिया जाता था लेकिन उनके ऊपर ऐसी बंदिशें लगाई गयीं मानो स्त्री कोई मनुष्य न होकर पशु है, जिसे अपनी इच्छा से हँसने, रोने, बोलने, उठने, बैठने, चलने यहाँ तक कि क्या खाना है और क्या पहनना है तक का भी हक नहीं दिया गया। हर कार्य के लिए अनुमति लेना आवश्यक नहीं बल्कि अनिवार्य बना दिया गया। अपने लिए पुरूषों ने सभी नियम कायदों में शिथिलता बरती है। पुरुष चाहे जो करें वह अपनी मर्जी का स्वामी है :

'नरकृत शास्त्रों के बँधन हैं सब नारी ही को लेकर अपने लिए सभी सुविधाएँ पहले ही कर बैठे नर।''

प्राचीन काल में बनी इस व्यवस्था ने इतनी गहरी पैठ पुरुष के मस्तिष्क में जमायी कि फिर महिलाओं की स्थिति में दिन–ब–दिन गिरावट आती चली गयी। कुछ महान लोगों ने स्त्री और शूद्र को एक ही कोटि में रख दिया। हमारे कई ऐसे शास्त्र हैं, जिन्हें स्त्रियाँ भी बहुत मानती हैं लेकिन उन्हें शायद इस बात का कोई इल्म नहीं है कि स्त्री और शूद्र के लिए एक जैसे नियम बने हुए थे। सबका ईश्वर एक है तो फिर स्त्री का पति उसका परमेश्वर (परम. ईश्वर) कैसे हो गया .....? क्यों स्त्री ने पति को ईश्वर से भी ऊँचा स्थान दिया है और उसके इसी ईश्वर ने सदियों से लेकर अब तक उस पर इतने अत्याचार किए हैं कि शायद उनके घाव नहीं भरने वाले हैं। अपने को एक अत्याचारी पुरुष ने नारी की दृष्टि में ईश्वर से भी बड़ा बताया है और ईश्वर के समान, स्त्री के साथ कभी व्यवहार नहीं किया तो फिर यह मंदबुद्धि नारी हमेशा से स्वंय को अबला मानकर दासी क्यों बनीं हुई है?

मध्यकाल में आकर तो स्त्री केवल उपभोग की वस्तु मात्र रह गई थी। जब जिसने देखा तलवार की नोंक पर शोषण करने लगा। पुरुष के शोषण से बचाने हेतु ही पर्दा प्रथा का प्रचलन शुरू हुआ अर्थात् समस्या को समाप्त न करके स्त्री को ही ढँक दो यानि कि पुरुष यहाँ भी स्वंय पर नियंत्रण नहीं रख सका, तो उसने नारी के हवा या साँस लेने पर ही पर्दा डाल दिया। हालांकि इक्का–दुक्का महिलाओं ने शासन संभालने का प्रयास भी इसी समय किया। मध्यकालीन भारत में नारी की दशा और भी बदतर हो गई। मुस्लिम आक्रांताओं के भय के कारण महिलाओं के घर से बाहर निकलने पर, उनके शिक्षा ग्रहण करने पर पाबंदी लगा दी गई तथा जल्दी से जल्दी विवाह करने पर जोर दिया जाने लगा। नतीजा हुआ बाल–विवाह, जहाँ अपने से दोगुने–तिगुने पुरुष के साथ विवाह करके इज्जत बचायी जाने लगी। अगर स्त्री विधवा हो गयी तो उसे दूसरा विवाह करना तो दूर रहा बल्कि जीवन लीला ही समाप्त कर दी जाती थी। एक मनुष्य, दूसरे मनुष्य को कैसे जला सकता है .....? लेकिन मध्यकाल में न जाने कितनी विधवाओं को अभिशाप समझकर आग के हवाले किया गया। महिलाओं से कभी पूछा तक नहीं जाता था कि वे अपने पति की चिता पर सचमुच जलना चाहती भी थीं या नहीं ..... अगर किसी महिला ने प्रतिरोध भी किया तो उसके हाथ–पैर बाँधकर उसे जलती आग में झोंक दिया जाता था। आज के समय में सोचकर भी रूह काँप उठती है कि स्त्री के विधवा होने में उसका क्या कसूर था। एक के प्राण ईश्वर ने लिए (पति के) तो दूसरी के प्राण (स्त्री के) समाज ने।

धन्य हैं हम अंग्रेजों के जो उन्होंने हमें इन नारकीय कुरीतियों से तो मुक्ति दिलाई। भारतीयों के लाख विरोध करने पर भी अंग्रेजों ने सती प्रथा, बाल–विवाह को रोकने का भरपूर प्रयास किया। विधवा–विवाह को भी प्रोत्साहन, कुछ भारतीयों जैसे ईश्वर चंद्र विद्यासागर तथा राजा राममोहन राय तथा अंग्रेजों के प्रयासों के फलस्वरूप मिला। जब भारत में अंग्रेजी शिक्षा का आगमन हुआ तो महिलाओं ने भी अंग्रेजी पढ़ना शुरू किया, शिक्षा की ओर अपने कदम बढ़ाए, राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की आग पूरे भारत में ऐसी फैली जिसमें महिलाओं ने भी घर की दहलीज को लांघकर धरना प्रदर्शन व गांधी जी के सत्याग्रह में भागीदारी की। स्वतत्रंता के

समय भारतीय चिंतकों व मनीषियों ने महिलाओं के लिए हमारे संविधान में भी अनेक उपबंध किए।

महिलाओं ने अपनी खोई हुई गरिमा को स्वतंत्रता के बाद पहचाना है। उन्होंने यह समझ लिया है कि जिस स्वतंत्रता, सम्प्रभुता गरिमा को हमें कानूनों द्वारा सौंपने के प्रयास किए जा रहे हैं वह तो हमारा स्वतः स्फूर्त एवं जन्म–सिद्ध अधिकार है। इतनी सदियों से सोई हुई या सुलायी गयी स्त्री की अतंरात्मा ने उसे झकझोरा तो उसे भी अपने होने का अहसास हुआ। उसने स्वंय को एक उपभोग की वस्तु तथा दासी से ऊपर रखकर स्वंय के बारे में सोचा। आज एक ग्रामीण स्त्री भी जानती है कि पुत्र के पैदा होने या न होने में स्त्री का कोई कसूर नहीं है, वह यह जान चुकी है कि बरसों से उसे इसी लिए प्रताड़ित किया जाता था कि वह पुत्र पैदा नहीं कर रही है तो इसमें उसी को दोष है। पुरुष भी इस बात को जानता था लेकिन स्त्री को कमजोर समझकर तथा अपने मिथ्या गर्व को बचाने हेतु नारी को ही दोषी ठहराता था। पूर्व में तथा आज भी महिलाओं के माँ न बन पाने में अधिकतर पुरुष की ही भूमिका रहती है लेकिन महिलाओं पर आज भी यह दोष लगाया जाता है कि वह बाँझ है और उस पर अनगिनत अत्याचार किये जाते हैं।

सरकार ने पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण तो दे दिया है लेकिन वास्तव में कितनी महिलाएँ सरपंच या ग्राम प्रधान के रूप में कार्य करती हैं ये हम सभी जानते हैं। उनके स्थान पर उनके पति या पुत्र वास्तविक संचालन करते हैं। संसद में महिलाओं की स्थिति हमारे देश में मात्र 8.3 प्रतिशत है। महिलाओं को एक–तिहाई आरक्षण दिए जाने वाला विधेयक पुरुष मानसिकता के कारण हर बार पारित नहीं हो पाता है। जिन महिलाओं को वास्तव में अधिकार दिए गए हैं उन्होंने यह साबित भी कर दिखाया है कि महिलाएँ भी पुरूषों से कम नहीं हैं।

आज समय बदला है। आज की महिलाएँ हर क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रही हैं। किसी भी क्षेत्र में किसी न किसी महिला के नाम का जगमग सितारा दिखायी दे जाता है। इतने प्रयासों के बावजूद भी यह समृद्धि की तस्वीर अर्थात् आगे बढ़ती महिलाएँ शहरी क्षेत्रों में बुलन्दियों पर हैं जबकि 70 प्रतिशत जनसंख्या आज भी गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण महिलाओं में भी जागरूकता आई है। लेकिन उन्हें अभी और प्रयास करने पड़ेंगे और इंतजार करना पड़ेगा इस पुरूषवादी अहम् से निकलने का।

स्त्रियों की सुरक्षा आज एक राष्ट्रीय चुनौती बन गयी है। बढ़ती उपभोक्तावादी संस्कृति में महिलाएँ भी 'उत्पाद' के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं। एक ओर जहाँ महिलाओं ने घर से बाहर पैर रखकर ऊँचाइयों को छुआ हैं वहीं आज बलात्कार, हत्या, तेजाब फेंकने जैसी घटनाएँ बढ़ी हैं जिसने पुरुष की राक्षस प्रवृत्ति को उजागर किया है और अब भारत में दैत्य ही अधिक नज़र आते हैं, जिसके प्रमाण हमें मिलते रहते हैं (16 दिसम्बर 2012 की घटना)। महिलाओं के लिए सुरक्षा एक और चुनौती है उनके सामने, उनकी प्रगति की राह में .....।

अपनी छवि को बनाओ बेहतर

संजु रानी
एम.टी.एस.

आप कभी ऐसी चर्चाओं में ज़रूर शामिल हुए होंगे जो किसी व्यक्ति के बारे में तब की जाती हैं जब वह सामने उपस्थित न हो। प्रत्यक्ष रूप से टिप्पणी भले ही न करते हों लेकिन हमारे मन में व्यक्ति को लेकर एक धारणा या छवि जरूर बनी रहती है।

जिस प्रकार हम अपने मन में लोगों की छवि बनाते हैं उसी प्रकार लोगों के मन में भी हमारी छवि बनती है। अपनी अच्छी छवि बनाने के लिए हम हमेशा सजग रहते हैं किन्तु जाने–अनजाने में हमारा ध्यान कई बार ऐसी बातों की तरफ नहीं जाता जो हमारी छवि को बना या बिगाड़ सकती हैं।

जब हमें पता चलता है कि लोगों के मन में हमारी छवि अच्छी नहीं है तो हम खुद हीन–भावना के शिकार हो जाते हैं और हमारा आत्मविश्वास डगमगाने लगता है। कक्षा में या आपके किसी मित्र में, छवि ही आपको उनके करीब लाती है और आपकी लोकप्रियता में वृद्धि करती है। काफी हद तक आपकी छवि आपके व्यक्तित्व से ही निर्धारित होती है।

अगर हम यह चाहते हैं कि लोगों के मन में हमारी छवि अच्छी बने तो हमें व्यक्तित्व के उन सभी पहलुओं की ओर ध्यान देना होगा जिनसे हमारी छवि बन या बिगड़ सकती है। हमारी चाल–ढाल, कपड़े पहनने का सलीका, बातचीत करने का तरीका ये ऐसी चीजें हैं, जिनके प्रति सजग रहकर हम अपनी बेहतर छवि बना सकते हैं।

ध्यान रखिए आप लोगों की जिन बातों को बुरा समझते हैं, आप में भी उन्हीं बातों का होना, लोगों को बुरा लग सकता है। मसलन अगर आपको कोई नापसन्द है, क्योंकि उसे झूठ बोलने की आदत है तो आपको भी देखने की जरूरत है कि आपकी भी आदत ऐसी तो नहीं है। इसके अतिरिक्त अपने बारे में कोई गलतफहमी न पालें। आत्मविश्लेषण के जरिए हम अपने गुणों को पहचान सकते हैं क्योंकि जब तक इन कमियों का पता न हो तब तक इन्हें दूर नहीं किया जा सकता।

खुलेपन से हमें लोगों के साथ तालमेल बिठाने में सहायता मिलेगी, साथ ही हम खुद नए विचारों के लिए अपने आपको तैयार कर सकेंगें। जिन महत्वपूर्ण मामलों में आप फैसले को सही मानते हैं, वहां अपना दृढ़ बना रहना जायज है, लेकिन यहां अपनी दृढ़ता को इस प्रकार प्रदर्शित करें कि सामाने वाले व्यक्ति को बुरा न लगे। भाषा एवं उच्चारण के साथ–साथ अपने शब्दों में, शुद्धता के शब्दकोष को भी समृद्ध बनाया जाए।

अनावश्यक टिप्पणी एवं आलोचना से बचें, अपनी अभिव्यक्ति को केन्द्रित बनायें। चिल्लाकर बोलना अच्छा नहीं माना जाता है। अच्छे श्रोता बनकर भी लोगों का दिल जीता जा सकता है। नकारात्मक दृष्टिकोण वाले की छवि भी नकारात्मक ही होती है। अतः नकारात्मकता से बचें।

यदि किसी ने आपको कॉल किया है तो उसको कॉल बैक जरूर करें। जब भी किसी से बातचीत हो रही हो तो बिना व्यवधान डाले उनकी बातों को अवश्य सुनें। यह किसी की बातों को पूरी तरह से समझने और उसे जानने के लिए आवश्यक है। यदि कोई भी व्यक्ति अपनी ही बात कहता चला जाए तो भी ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि आप उसकी बात ध्यान से सुन रहे हैं।

यदि आप अपनी छवि बेहतर बनाए रखना चाहते हैं तो आपको इन सभी बातों का अनुसरण करना होगा तभी आप अन्य व्यक्ति के मन में अपनी छवि बेहतर बना सकते हैं।

चाह गई चिंता मिटी, मनुआ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, सोई साहंसाह।।

– कबीरदास

चिंता करता हूँ मैं जितनी
उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनंत में बनती
जातीं रेखाएं दुःख की।

– जयशंकर प्रसाद

युग–युग के संचित संस्कार, ऋषि–मुनियों के उच्च विचार।
धीरों–वीरों के व्यवहार, हैं निज संस्कृति के श्रृंगार।।

– मैथिलीशरण गुप्त

धन की यादें नहीं होती पर अनुभव की होती हैं

प्राचीश सिंघल
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

आप कभी नहीं जोड़ पाएंगे कि आपकी शिक्षा में कुल कितना खर्च हुआ लेकिन अपने स्कूल और कालेज़ की यादें आपके ज़हन में हमेशा बनी रहेंगी। अब से कुछ सालों बाद आप हॉस्पिटल के बिलों को भूल जाएंगे लेकिन अपनी माँ की जान बचा पाने या घर में नये मेहमान के आने की खुशी हमेशा याद रखेंगे। कुछ सालों बाद अपने हनीमून के खर्च आपको याद नहीं रहेंगे लेकिन अपनी आखिरी सांस तक साथ बिताए हुए पल याद रहेंगे। धन की यादें नहीं होती पर अनुभव की होती हैं।

अच्छा वक्त और बुरा वक्त, अमीरी का वक्त और गरीबी का वक्त, वक्त जब भविष्य बहुत सुरक्षित लगता है और वक्त जब आपको यह भी नहीं मालूम होता कि कल होगा भी या नहीं ..... जीवन हर किसी के लिये किसी न किसी प्रकार से एक रोलर–कोस्टर की सवारी के समान है। इन सभी प्रचुरताओं और सभी अभावों के ऊपर यदि कुछ रह जाता है तो वो बस अनुभव की यादें। कभी पर्स पूरा भरा था ..... कभी जेब भी खाली थी। आपके पास सब कुछ होता है पर फिर आप परेशानियों के कारण ढूंढ लेते हो, जबकि आपके पास पर्याप्त न हो और फिर भी खुश रहने के कारण हो सकते हैं। आज आप अपने जीवन के बिताये हुए समय में झांक कर उस समय को याद करेंगे जब आप सबके साथ मिलकर हँसे थे और खूब आनन्द किया था तो आपकी आखें खुशी के आसुंओ से भर जाऐंगी और जब आप अकेले रोए थे तो खुद पर हँसी भी आएगी। इन सब में आपको इतना अनुभव होगा कि आप खुद पर एक इतिहास भी लिख सकते हैं और अकेले में उन्हें याद भी कर सकते हैं। इन सब बातों से स्पष्ट है कि इन अनुभवों की कीमत याद नहीं रहेगी लेकिन अनुभव कभी भी भुलाए नहीं जा सकेंगे।

आप अभी भी अपने माता–पिता को अगर तीर्थ यात्रा पर नहीं ले जा सकते तो कम से कम पास के मन्दिर तो ले ही जा सकते हैं। आप अभी भी अपने बच्चों को अगर छुट्टियों में कहीं बाहर नहीं ले जा सकते तो कम से कम उनके साथ पास के पार्क में खेलने तो जा ही सकते हैं। अगर आप अपनी पत्नी को फ़िल्म दिखाने नहीं ले जा सकते तो कम से कम कुछ समय बैठ कर उससे बात तो कर ही सकते हैं। आपका स्वास्थ्य, ज्ञान और आध्यात्मिक उन्नति मात्र आपकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर नहीं करती अपितु इसके कई अन्य कारक भी हैं, जिसमें मनुष्य की मनोस्थिति सर्वोपरि है। समय बीत जायेगा ..... आर्थिक स्थिति संभल जायेगी ..... और इन सबमें; मैं नहीं चाहूंगा कि आप अपने जीवन के बिताये हुए पलों में देखें और अहसास करें कि

आपने अपने जीवन में कुछ भी नहीं किया और हमेशा उदास रहे। अगर आप उतने में खुश नहीं है जितना आपके पास है तो आप कभी भी खुश नहीं रह सकेंगे भले ही आप के पास बहुत कुछ भी क्यों न हो। आप अपने जीवन को लोगों के लिये एक प्रेरणा का स्रोत बनाएं, जीवन का सम्मान करें और जुनून के साथ जियें।

हमेंशा ध्यान रखें: ''अगर आप खुशियों के आने का इन्तजार करेंगे तो कभी खुश नहीं हो पायेंगे''

अगर आपको ठग बनना है, तो काल को ठगने वाला बनिए,
अन्यथा अत्यन्त सरल बन जाइए।
तथा अपने आप में इतनी सरलता ले आइए
कि आप में हर समय भोलापन ही दिखाई दे,
क्योंकि भोलेपन में तो परमात्मा का वास होता है।
इसीलिए तो भगवान शंकर को भोलेनाथ कहा जाता है।

किसी को बगैर समझे उसके प्रति अपने मन में कोई धारणा नहीं बनानी चाहिए,
क्योंकि दिल की बात जल्दी ही दिमाग पर हावी हो जाती है, व जुबान पर
आ जाती है और संबंध जुबान से ही बनते और बिगड़ते हैं।

– संजु रानी

गरीब की ईमानदारी

प्रवीण कुमार श्रीवास्तव
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

यूँ तो यह घटना काफी पुरानी है फिर भी कभी–कभी जहन की याद ताजा कर देती है। घटना है तो छोटी, पर सीख वाली है। पिताजी डीजल लोकोमोटिव वर्कशॉप (DLW) वाराणसी में कार्यरत थे और उसी के परिसर में स्थित रेलवे कॉलोनी में हम लोग रहते थे। सन् 1979 में हाई–स्कूल की परीक्षा पास करने के बाद मुझे अपना एडमिशन वाराणसी शहर में लेना पड़ा जो वहाँ से 10 कि.मी. दूर था। उस समय आने जाने के पर्याप्त साधन न होने के कारण पिताजी ने शहर में ही शिफ्ट करने का निर्णय लिया। जिस घर में हम लोगों ने शिफ्ट किया, उसकी दीवारों की पुताई थोड़ी पुरानी व गन्दी हो चुकी थी। अतः पिताजी ने दीपावली के पूर्व उसकी पुताई कराने का निर्णय लिया। एक मिस्त्री व दो मजदूरों ने पुताई का ठेका ले लिया। उस समय मजदूरों को लंच के लिये अलग से दो रुपये दिये जाते थे। किन्तु मेरी माताजी थोड़ा धार्मिक स्वभाव की थीं, इसलिये वह उन्हें पैसे देने के बावजूद खाना भी खिला दिया करती थीं।

चूँकि मकान बड़ा था, इसलिए पुताई में 10–12 दिन लगने थे। 7–8 दिन का काम करने के बाद एक दिन मजदूरों ने दीपावली पर घर जाने की इच्छा जताते हुए आगे काम करने से मना कर दिया और दीपावली के बाद काम पूरा कर देने का वादा किया। पिताजी को काफी क्रोध आया। उन्होंने तीनों मज़दूरों को काफी डाँट लगाई और आगे से काम पर न आने को कहा। मिस्त्री ने फिर से अपनी मजबूरी बताते हुए कहा कि सब को दूर रांची (बिहार) तक जाना है। अतः दीपावली के बाद आने का वादा किया। चूँकि दीपावली जैसे त्यौहार पर मजदूर बड़ी मुश्किल से मिलते थे। अतः पिताजी काफी नाराज़ थे और दुबारा उससे काम कराने को तैयार नहीं हुए। इसी बीच बाकी बचे कामों को दूसरे मजदूरों द्वारा किसी तरह पूरा करा लिया गया।

एक दिन जब पिताजी ऑफिस के लिए तैयार हुए और उन्होंने अपनी घड़ी मांगी, तो हम लोगों को नहीं मिली। हम लोगों ने सोचा कि पुताई चल रही है कहीं इधर–उधर होगी, पर काफी खोज–बीन के बाद भी वह नहीं मिली। घर में वह इकलौती घड़ी (HMT) थी और वह भी उन्हें अपनी शादी में मिली थी। बात आई–गई हो गई। चूँकि घड़ी जरूरी थी इसलिये पिताजी ने उसे अगले महीने खरीदने की योजना बना ली। एक शाम हम लोग बाहर की लॉबी में बैठ कर चाय पी रहे थे तभी पुराना मिस्त्री आता हुआ दिखा। पिताजी का चेहरा नाराज़गी से भर गया। जैसे ही वह दरवाजे पर आया पिताजी ने उसे डाँट कर वापस जाने के लिये कहा। उन्होंने कहा कि तुमने मुझे ऐन वक्त पर धोखा दिया है। उस मिस्त्री ने हाथ जोड़कर

क्षमा मांगी और अपने कुर्ते की जेब से एक घड़ी निकाल कर दिखलाते हुए पूछा कि यह कहीं आपकी तो नहीं। वह घड़ी पिताजी की ही थी। उन्होंने कहा यह है तो मेरी ही, किन्तु तुम्हें कहाँ से मिली। उसने कहा कि इस घड़ी को जब मैंने अपने मजदूर के हाथ में देखा तो मैंने पूछा कि यह घड़ी तुम्हारे पास कहाँ से आयी, इसे तो मैंने आपके यहाँ अलमारी पर देखा था। जिसकी थाली में खाया उसी में छेद किया तब उस मजदूर ने कबूल किया कि वह आपके यहाँ से चुरा लाया था। अतः घड़ी आपको वापस करने आया हूँ और अपने मजदूर द्वारा किये गये इस कृत्य पर शर्मिन्दा हूँ। पिताजी का सारा गुस्सा काफूर हो चुका था। पिताजी ने उसे बीस रुपये (उस समय बीस रुपये की काफी कीमत हुआ करती थी) देने की कोशिश की। पर उसने लेने से इन्कार करते हुए फिर से क्षमा मांगते हुए चला गया। यह घटना मेरे दिलो–दिमाग पर छा गई और आज भी वक्त–बेवक्त मेरी याद में ताजा हो जाया करती है। यह घटना इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उस समय किसी गरीब के लिए एक घड़ी की कीमत आज किसी को एक कार मिल जाने के समान थी और उससे भी महत्वपूर्ण बात मिस्त्री द्वारा उस नमक की लाज रखना जो उसने हमारे घर खाया था। इस कहानी से यह भी सीख मिलती है कि परोपकार व ईमानदारी कभी व्यर्थ नहीं जाती है।

आज वक्त के बदले मिजाज को देखकर मैं यह कहने को मजबूर हूँ कि :

''वो बेवकूफ हैं जो भूखे रहकर भी ईमान का सौदा नहीं करते।
हम बुद्धिजीवी हैं जो पेट भरने पर भी ईमान बेच दिया करते हैं।''

हर्ष के साथ शोक और भय इस प्रकार लगे हैं जैसे प्रकाश के संग छाया।
सच्चा सुखी वही है जिसकी दृष्टि में दोनों समान हैं।

– धम्मपद

आनंद ही ब्रह्म है, आनंद से ही सब प्राणी उत्पन्न होते हैं. उत्पन्न होने पर
आनंद से ही जीवित रहते हैं और मृत्यु से आनंद में समा जाते हैं।

– उपनिषद

सच्चा सुख

रामपाल सिंह
उपमहालेखाकार

सभी धर्मों और सभी धार्मिक शास्त्रों ने कहा है कि यह जगत मिथ्या है। यहाँ तक कि भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में कहा है कि यह जगत नश्वर और मिथ्या है। अतः ऐसे मिथ्या जगत में सच्चा सुख मिले, इसकी आशा नहीं की जा सकती। वास्तव में इस मिथ्या जगत में हम जिसे सुख कहते हैं वह सुख नहीं है बल्कि दुःख है। इस बात को उदाहरण द्व ारा इस प्रकार समझा जा सकता है। माना कि यदि कोई व्यक्ति यह सोचे कि अगर मेरे पास सुख की सभी सामग्री एकत्र हो जाए अर्थात् मेरे पास कोठी–बंगला, हवाई जहाज और सभी प्रकार के सुख की सामग्री हो जाये तो मैं सुखी हो जाऊंगा। परन्तु यह सरासर झूठ है। यह सच्चा सुख नहीं है। यह सुख कभी भी दुःख में बदल सकता है।

सच्चा सुख तो परम अर्थात् अनन्त होता है। परम सुख का कभी अन्त नहीं होता अर्थात् सच्चा सुख स्थायी होता है। परन्तु ऐसा सुख भगवान के चरणों में ही संभव है। भगवान के बताये रास्ते पर चलें, भगवान की बतायी गयी वाणी का अनुकरण करें। ऐसा सुख तभी प्राप्त होता है जब मनुष्य काम, क्रोध, लोभ, मोह और अंहकार को त्याग कर अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे नियमों का अनुकरण करे और व्यवहारिक, नैतिक गुणों से सम्पन्न, वास्तविक, कल्याणकारी, आकर्षणमय जैसे विशेष गुणों से सम्पन्न परमपिता परमेश्वर को याद रखें और उसके गुणों का बखान करें तथा जो भी करें उपरोक्त नियमों को ध्यान में रखकर ही करें। इस बात को एक उदाहरण से भी समझा जा सकता है।

एक राजा था और उस राजा के राज्य में एक साधु रहता था। वह साधु नंगा भभूति लगाये और धूनी रमाये राजा के उपवन में समाधिष्ठ रहता था। सर्दियों का मौसम था तो एक दिन राजा ने पूछा कि कहिए महात्मा जी, आपकी रात कैसे कटी। महात्मा जी ने उत्तर दिया कि राजन् मेरी रात तो बहुत अच्छी कटती है, यहां तक कि आप से भी ज्यादा अच्छी। राजा हैरान होता है कि इसके पास तो कोई खास मोटा कपड़ा भी नहीं है, नंगा रहता है और तन पर भभूति लगाता है, घर भी नहीं है फिर यह मेरे से अच्छी रात कैसे काट सकता है। मेरे पास तो सब कुछ है। इसका उत्तर राजा ने जानना चाहा। साधु ने उत्तर दिया कि राजन् मेरी रात आपसे अच्छी इसलिए कटती है कि मैं भगवान के चरणों में रहता हूँ। उसी का गुण–गान करता हूँ। रात को धूनी रमाता हूँ और गरम–गरम राख में सो जाता हूँ। मुझे जरा सी भी और किसी भी किस्म की चिन्ता नहीं होती है क्योंकि मेरे पास जो कुछ भी है वह मेरा नहीं है और मैने अपना

सब कुछ भगवान को अर्पण कर दिया है। परन्तु आपके पास सुख के सभी साधन होते हुए भी आपको चिन्ता लगी रहती है। पता नहीं कितनी विपदाएं होंगी जो आपको घेरे रहती हैं इसलिए आपको रात में भी चैन नहीं होता परन्तु मैं सुख से सोता हूँ। राजा पर उसकी बात का बहुत प्रभाव पड़ा और उस साधु की देख–रेख अच्छी प्रकार से करने लगा।

इस प्रकार सच्चा सुख अनन्त होता है। सच्चे सुख को कोई हानि नहीं पहुँचा सकता। इस प्रकार के सुख को कोई चोर भी नहीं चुरा सकता। अतः परम सुख तो भगवान के चरणों तथा उसके बताये गये रास्ते पर चलने में ही है। यह सुख कभी दुःख में नहीं बदलता। अगर एक बार ऐसा सुख प्राप्त हो जाता है तो वह फिर दुःख में नहीं बदल सकता जब तक कि वह भगवान को ध्यान में रखकर अपने कार्यों को सम्पन्न करता है।

मूढ़मति इंसान धन संपत्ति जोड़ने में जीवन खपा डालता है। संचय करने की प्रवृत्ति उसे अशांत बनाए रखती है। मनुष्य पदार्थों की चिंता करता है, लेकिन पदार्थों को देने वाले का चिंतन नहीं करता। जिस दिन वह चिंता की जगह परमात्मा का चिंतन शुरू कर देगा, उसका सहज ही कल्याण हो जाएगा।

– आदि शंकराचार्य

हम अपने बारे में जो दृढ़ चिंतन करते हैं, जिन विचारों में संलग्न रहते हैं, क्रमशः वैसे ही बनते जाते हैं।

– सुभाषित

जिसमें सोचने की शक्ति खत्म हो चुकी है, समझ लीजिये वह व्यक्ति बरबाद हो चुका है।

– सुकरात

शोक के समंदर में आस्था का सैलाब

प्रभाकर दुबे
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

अनादि काल से करोड़ों जनमानस की आस्था व विश्वास का प्रतीक भारत का आध्यात्मिक ताना–बाना, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परम्पराओं एवं समरसता पूर्ण मूल्यों के साथ सम्पूर्ण विश्व का मार्ग–दर्शन करता आ रहा है। भारतीय दर्शन में जीवन के भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों ही पक्षों का सांगोपांग वर्णन किया गया है तथा गहन शोध एवं सघन विचार–विमर्श के उपरान्त जीवन को तत्व से जानने एवं समझने का विलक्षण प्रयास न केवल अद्वितीय है वरन सम्पूर्ण प्राणियों के कल्याण में समर्थ है। भारतीय संस्कृति का मूलाधार वेद हैं। उनमें तीन काण्ड (कर्म, उपासना और ज्ञान) माने जाते हैं। उन्हीं तीनों का विशद वर्णन पुराण व इतिहास–ग्रन्थों में मिलता है, जिनकी रचना रोचक कथाओं के माध्यम से महर्षि वेद व्यास ने सर्व साधारण को समझाने के लिए की है।

दार्शनिकों ने वैसे तो परमात्मा के स्वरूप को अनेकों ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है पर उपासना की दृष्टि से मुख्यतः इसे दो रूपों में स्वीकार किया गया है–निगुर्ण निराकार एवं सगुण साकार। ज्ञानी जनों ने ईश्वर के सगुण निराकार रूप को भी मान्यता प्रदान की है। जहाँ तत्व ज्ञानी ईश्वर को तत्व से जानने के कारण मोह बंधन से मुक्त हो जाते हैं वहीं सर्वसाधारण जन ईश्वर के सगुण साकार रूप का ध्यान, भजन व कीर्तन कर आनन्द की अनुभूति प्राप्त करते हैं और यही कारण है कि सम्पूर्ण भारत वर्ष में तीर्थ–स्थलों, देवालयों तथा संत समागम स्थलों की भरमार है, जहाँ जाकर मन आनन्द विभोर हो जाता है तथा शान्ति की प्राप्ति होती है। आध्यात्मिक स्तर पर निर्गुण–सगुण के भेद को मिटाने का प्रयास किया गया है। भगवद्गीता में उद्धृत निम्न श्लोक से स्थिति स्पष्ट हो जाती है :

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।
(गीता 4/11)

भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन जो भक्त मुझे जिस प्रकार भजते हैं, मैं भी उन्हें उसी प्रकार भजता हूँ, क्योंकि सभी मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं। वस्तुतः ज्ञेय एक मात्र परमात्मा ही है तथा उनको जान लेने के बाद इस जीवन में कुछ भी जानना या पाना शेष नहीं रह जाता अर्थात् परम संतुष्टि प्राप्त हो जाती है।

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तं इव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तजज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च।।
(गीता 13/16)

अर्थात अनेक आकारों में विभक्त यह परमात्मा प्राणियों में अविभक्त है, अर्थात् विभाग रहित एक ही तत्व विभक्त की तरह प्रतीत होता है। सभी प्राणियों में स्फूर्ति प्रदान करने वाला एक ही तत्व विद्यमान है। वही जगत की उत्पत्ति करने वाला होने के कारण ब्रह्मा, पालन करने वाला होने के कारण विष्णु तथा संहार करने वाला होने के कारण महादेव के रूप में विराजमान है।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्ररूढ़ानि मायया।।
(गीता 18/61)

भगवान श्री कृष्ण कहते हैं, हे अर्जुन, शरीर रूपी यन्त्र में आरूढ़ सम्पूर्ण प्राणियों का अर्न्तयामी परमेश्वर अपनी माया से अनेक कर्मों के अनुसार भ्रमण करता हुआ सभी प्राणियों के हृदय में स्थित है। इस प्रकार वही सर्व व्यापक, सर्व स्वरूप परमात्मा है तथा वही जानने योग्य है। रूप एक, दृष्टि अनेक हो सकती है। भक्त उसे जिस रूप में देखना चाहता है, वह उसे उसी रूप में दिखायी देने लगता है। जहाँ ज्ञानीजन तत्व ज्ञान के कारण ईश्वर को निराकार मान कर उनके ध्यान में निमग्न रहते हैं वहीं सगुण साकार रूप के उपासक विभिन्न रूपों में पूजा, अर्चना का आनन्द प्राप्त कर आत्मविभोर होते हैं। ज्ञानियों के लिए यह कभी विवाद का विषय नहीं रहा है। श्री राम चरित मानस के बालकाण्ड में भगवान शंकर माँ पार्वती संवाद में इसका स्पष्ट रूप से निवारण देखने को मिलता है।

सगुनहिं अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान वुध वेदा।।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।

उपर्युक्त दृष्टान्तों से स्पष्ट है कि सगुण और निर्गुण ब्रह्म में कोई भेद नहीं है, ऐसा मुनि, पुराण, पण्डित और वेद सभी कहते हैं। जो ब्रह्म निगुर्ण, अरूप (निराकार), अलख (अव्यक्त) और अजन्मा है वही भक्तों के प्रेम वश सगुण साकार हो जाता है। ''ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या'' को दृढ़ता के साथ स्वीकारने के बाद तो भ्रम जैसी कोई स्थिति रह ही नहीं जाती है।

सगुण साकार ब्रह्म की उपासना का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा बहुतायत भारतीय जन मानस के लिए ग्राह्य है। प्रकृति के प्रत्येक उपादान, जो प्राणि मात्र के जीवन का आधार स्तंभ है को देवरूप में स्वीकार कर उनकी पूजा–अर्चना तथा उनके प्रति कृतज्ञता का भाव इस मत को भव्यता प्रदान करता है तथा यह भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। तीर्थों तथा देवस्थानों में श्रद्धालुओं की उमड़ती भीड़ तथा अनादि काल से प्रचलित दान, पूजा–पद्धति के बिना भारतीय संस्कृति की कल्पना असंभव है। अवतारों से विभूषित यह ताना–बाना आस्था विश्वास का अनूठा संगम है जो प्रत्येक भारतीय के रोम–रोम में बसा हुआ है। स्वयं देवाधिदेव भगवान शंकर तथा श्री हरि जहाँ मूर्त रूप में विद्यमान हों तथा उनका दर्शन एवं ध्यान कर भक्तगण जन्म–जन्मान्तर

के पापों से मुक्त हो जाते हों, वहाँ संशय का स्थान ही कहाँ। आदि शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार धर्मपीठ (बदरिकाश्रम, द्वारका, जगन्नाथपुरी तथा श्रृंगेरी) देश की चार दिशाओं में अवस्थित हैं तथा सम्पूर्ण देश को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में पिरोने में समर्थ हैं।

शंकराचार्य द्वारा स्थापित चारों धाम यात्रा जहाँ प्रत्येक सनातन धर्मी का स्वप्न होता है वहीं देवभूमि में अवस्थित चारों धाम (यमुनोत्री, गंगोत्री, केदारनाथ, बदरीनाथ) यात्रा का पौराणिक महत्व कम नहीं है। यहाँ इस सम्बन्ध में संक्षिप्त चर्चा समीचीन होगी।

महाभारत युद्ध की समाप्ति के बाद वेद व्यास ने पाण्डवों को शिव का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए हिमालय की तरफ भेजा। पाण्डवों को अपना ही गोत्र हत्यारा समझ शिव जी उन्हें दर्शन नहीं देना चाहते थे। अतः महिष (भैंसा) का रूप धारण कर शिव अन्य भैंसों के मध्य विचरण करने लगे। ऐसी मान्यता है कि भीम द्वारा भगवान शिव के महिष रूप को पहचान लेने के कारण, भगवान शिव पृथ्वी में समाविष्ट होने लगे, तभी भीम ने शिव का पिछला भाग पकड़ लिया। वह भाग पत्थर बन गया। आज वही पिछला भाग शिला रूप में केदारनाथ, नाभि मद्महेश्वर, भुजा तुंगनाथ, मुख रुद्रनाथ और जटा–कल्पनाथ, इस प्रकार ये पाँचों स्थान पंचकेदार के नाम से प्रसिद्ध हैं। केदार खण्ड के अध्याय 42 में केदार तीर्थ का महात्म्य वर्णित है :

केदारेश्वर लिंगस्थ घृताम्यक्त मुदग्वम्।
अंगयंगेन स्वस्यामि स्पृशन्प्रेरणा सकृत्पुमान्।।

श्री केदारेश्वर लिंग (पृष्ठ शिला) में उत्तम घृत मल कर अपने शरीर का स्पर्श करवाना चाहिए। ऐसी मान्यता है कि केदारनाथ के दर्शन के बिना बदरीनाथ का दर्शन निष्फल है।

नर नारायण पर्वत की उपत्यका में स्थित बदरीनाथ को पुराणों में मुक्तिप्रदा, योग सिद्ध, बदरीकाश्रय इत्यादि अनेक नामों से जाना जाता है। एक कथा के अनुसार एक बार श्री विष्णु जी लक्ष्मी जी से खिन्न हो क्षीर–सागर छोड़कर ऋषि समूह के साथ विशाल पुरी में योग ध्यान में रहने लगे। लक्ष्मी जी को जब इसका पता चला तो वह बदरी (बेर का वृक्ष) बन छाया प्रदान करने लगीं। वृक्ष से मीठा रस ऋषियों के ऊपर टपकने लगा। भगवान तथा ऋषियों ने नेत्र खोले और देखा कि लक्ष्मी जी बदरी वृक्ष बन कर छाया कर रही हैं। विष्णु के वरदान से लक्ष्मी जी की भी भगवान के साथ पूजा होने लगी। वही बदरी (लक्ष्मी) नारायण साथ हो कर बदरी नारायण या बदरी के नाथ (स्वामी) बनकर बदरीनाथ के रूप में यहाँ पूजित हैं। ऐसी धारणा है कि पहले नारायण स्वयं यहाँ रहते थे। कलियुग के आरम्भ होते ही नारायण की जगह मूर्ति की पूजा होने लगी। पुराणों में उल्लेख आता है कि ऐसा तीर्थ न तो इससे पूर्व हुआ है और न भविष्य में होगा।

बहुनि सन्ति तीर्थानि दिविभूमौ रसातले।
बदरी सदृशं तीर्थ न भूतं न भविष्यति।।
(स्कंद पुराण–2 वै. ख 1:55)

देवभूमि हमेशा से संत महात्माओं तथा भक्त जनों के आकर्षण का केन्द्र रही है। जहाँ एक तरफ अनेक नदियों का संगम तथा प्रकृति का मनोरम दृश्य एवं हिमालय की सुरम्य वादियाँ मन को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती हैं वहीं साकार रूप में हरि एवं हर की उपस्थिति भक्तजनों को अपनी ओर खींचने में सक्षम हैं। बदरीनाथ तथा केदारनाथ का दर्शन एवं अलकनन्दा के पावन जल का स्पर्श, सम्पूर्ण पापों का शमन कर मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है, ऐसी मान्यता है। परन्तु यह यात्रा इतनी ही सरल होती तो कहना क्या। 16 से 18 जून 2013 को जो प्रलयंकारी मंजर देखने को मिला एवं जो जन–धन की हानि हुई वह विचलित करने के लिए काफी था। एक बार तो ऐसा लगने लगा था कि कहीं चार–धाम यात्रा हमेशा के लिए बंद न करनी पड़े। आँसुओं का सैलाब व रोते–बिलखते लोग इस कमजोर विश्वास को कहीं न कहीं हल्का बल प्रदान कर रहे थे। पर यह श्मशान वैराग्य की तरह क्षणिक था। आस्था और ईश्वर में अटूट विश्वास के आगे इस तरह की घटनाएँ कितना प्रभाव डालेंगी यह कहना कठिन था।

श्रावण मास में माँ गंगा के पावन जल में स्नान से अप्रतिम आनन्द की अनुभूति होती है तथा जन्म–जन्मान्तर के पाप नष्ट हो जाते हैं, ऐसी मान्यता है। यह विचार कर 27 जुलाई 2013 को हरिद्वार जाने का अवसर मिला। मन के किसी कोने में यह भ्रम था कि केदारनाथ की प्रलयंकारी घटना का प्रभाव देखने को मिलेगा तथा स्नानार्थियों की संख्या काफी कम होगी। हरिद्वार पहुँचते ही यह भ्रम स्वतः समाप्त हो गया। सम्पूर्ण वातावरण केसरियामय हुआ था एवं चारों ओर शिवभक्तों का रेला विशाल मेले का रूप ले चुका था। भगवान भोलेनाथ की काँवड़ यात्रा अपने शबाब पर थी। अति आनन्द दायक तथा मनोरम दृश्य देखकर ईश्वर की शक्ति एवं उसमें लोगों की भक्ति का जो अनूठा संगम देखने को मिला वह अप्रतिम था। अपार जन समुदाय की, माँ गंगा के प्रति अनन्य भक्ति देखकर मन पुलकित हो गया। हिमालय के गर्भ से निकलकर सागर तक पहुँचने वाली माँ गंगा न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं वरन सम्पूर्ण उत्तर भारत की कृषि, स्नान, पान तथा यातायात का साधन उपलब्ध कराने वाली, अनेकों रूप से जीवन दायिनी हैं। गंगा का मीठा अमृतमय सुस्वाद तथा स्वच्छ जल प्राप्त कर सम्पूर्ण भारतीय जन मानस धन्य हो गया है। मानवीय गलतियों का दोष प्रकृति को देना अनुचित होगा। पुराणों के अनुसार गंगा तक पहुँचना सरल था पर गंगाद्वार, प्रयाग तथा गंगा सागर पहुँचना कठिन था जो आज के सुलभ साधन से आसान हो गया है–

सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा।
गंगाद्वारे प्रयागे च गंगा सागर संगमे।।

इस प्रकार चारों धाम यात्रा के समय प्रलयंकारी घटना के बाद भी हरिद्वार एवं ऋषिकेश में आस्था का सैलाब उमड़ना भक्ति में शक्ति का अनोखा उदाहरण है तथा ''एकोऽहं द्वितीयो नास्ति'' की उक्ति को मजबूती प्रदान करता है। जरूरत इस बात की है कि विकास के लिए हम प्रकृति तथा पर्यावरण के साथ आवश्यकता से अधिक छेड़छाड़ न करें। भारत भूमि संत महात्माओं की भूमि है तथा इसके महत्व को कम करना असंभव है। श्रावण मास में जहाँ एक

तरफ हर–हर गंगे तथा हर–हर महादेव का जयघोष हो रहा है वहीं दूसरी तरफ इस्लाम को मानने वाले निगुर्ण ब्रह्म के उपासक रमज़ान के महीने में उपवास रख खुदा की इबादत में मग्न हैं। भारत में गंगा–यमुनीय संस्कृति का यह अनूठा उदाहरण है। यदि इसके मूल तत्व को समझा जाए और तद्नुरूप आचरण किया जाय तो भारतीय जीवन दर्शन सम्पूर्ण जगत के कल्याण में सक्षम है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

हिन्दी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्त्रोत है

– सुमित्रानंदन पंत

कलकता से लेकर लाहौर तक, कुमाऊं के पहाड़ो से लेकर नर्मदा नदी तक, भारत (तब अविभाजित) के जिस हिस्से में भी मुझे काम करना पड़ा, मैंने उसी भाषा का आम व्यवहार देखा। मैं कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक या जावा से सिंधु तक इस विश्वास के साथ यात्रा की हिम्मत कर सकता हूं कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएंगे जो हिंदुस्तानी बोल सकते होंगे।

– सी.टी. मेटकाफ

प्रांतीय ईर्ष्या–द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी के प्रचार–प्रसार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चिज से नहीं मिल सकती। अपनी प्रांतीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं। पर सारे प्रांतो की सार्वजनिक भाषा का पद हिन्दी या हिंदुस्तानी को ही मिला हैं।

– सुभाषचंद्र बोस

सुखी जीवन का आधार, सकारात्मक विचार

मीरा दुबे

मनुष्य सभी जीवों में श्रेष्ठ एवं ईश्वर की अनुपम रचना है। अन्य जीवों की तुलना में ईश्वर ने उसे अत्यधिक बुद्धिमान तथा समर्थवान बनाया है ताकि वह अपनी बुद्धि तथा सोचने की शक्ति के बल पर न केवल अपना कल्याण करे वरन् प्रकृति के सभी उपादानों के प्रति दया व करूणा का भाव रखे तथा अपनी बुद्धि के द्वारा सम्पूर्ण जगत का मार्गदर्शन करे। इस कार्य में उसका विवेक उसका साथी होता है तथा सही गलत का भेद बता कर उसे सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों ने इसका बखूबी ध्यान रखा तथा धर्माचरण के द्वारा न केवल अपना जीवन सुखमय बनाया बल्कि प्रकृति के सभी उपादानों के प्रति आदर भाव रखा तथा रखना सिखाया। आध्यात्मिक चिंतन के माध्यम से सृष्टि में विद्यमान सभी तत्वों में ईश्वर का दर्शन किया। इस प्रकार जो वातावरण बना वह सुख व शान्ति प्रदान करने वाला था तथा उनका दृष्टिकोण सृजनात्मक था। इस जगत में विद्यमान प्रत्येक जीव में परमात्मा का अंश विद्यमान है। श्रीमद् भगवद्गीता के निम्न श्लोक से इसकी पुष्टि होती है :

ममैवांशो जीव लोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति।।
(गीता 15/7)

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि इस पंच भौतिक शरीर में चेतन सत्ता के रूप में यह आत्मा ईश्वर का ही अंश है तथा ईश्वर हर–हाल में जीव के कल्याण के लिए तत्पर रहते हैं। अब यह जीव पर है कि वह कर्त्तव्य कर्मों के द्वारा स्वयं अपना मार्ग दर्शक बनें तथा अहंकार के द्वारा उत्पन्न कर्तापन के भाव से अपने को निवृत्त करे तथा हर पल, हर क्षण तथा हर कार्य ईश्वर को समर्पित कर करे। मन में इस प्रकार का दृढ़ विश्वास हो जाने पर सांसारिकता से उत्पन्न होने वाले विकार स्वतः ही समाप्त हो जाते हैं तथा नकारात्मकता, चिन्ता, भय, शंका, ईर्ष्या, द्वेष एवं इस प्रकार के अन्यान्य दुर्गुण स्वतः मिट जाते है। सारी समस्यायें वहीं प्रारम्भ होती हैं जहाँ हम दुविधा में रहते हैं कि ईश्वर की सत्ता है अथवा नहीं और सभी कार्यों का कर्त्ता स्वयं को मान लेते हैं, तब कार्य का परिणाम आशानुरूप न होने से हम असफलता का कारण स्वयं को मानकर दुःखी होते हैं। वस्तुतः केवल कर्म हमारे हाथ में है उसके परिणाम को अपने अनुरूप ढालना हमारे वश में न होने से उसके विषय में चिन्तित होना उचित नहीं है, वरन् सहजता से उसे स्वीकारना ही युक्ति संगत है। श्रीमद् भगवद् गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से स्पष्ट शब्दों में कहा है :

कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्म फल हेतुर्भूर्मा ते संड्गोस्त्व कर्मणि।।
(अध्याय 2/47)

अर्थात् कर्म करना ही तेरा अधिकार है, फल में कभी नहीं। इस प्रकार फल के प्रति लिप्सा भी नहीं होगी तथा कर्म के प्रति मन में अश्रद्धा का भाव भी नहीं होगा। तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण गीता में कर्म न करने के लिए कहीं नहीं कहा गया है, केवल फल की इच्छा से किये जाने वाले कर्म से विवर्जना की बात कही गयी है तथा किस प्रकार का कार्य किया जाये जिससे कर्तापन का भाव भी न हो तथा फल की कामना भी न हो, पर विशेष बल दिया गया है, कारण कि कर्तापन का भाव न होने से किया गया कार्य न केवल निष्काम कर्म की श्रेणी में आता है वरन् मानव जीवन का परम लक्ष्य अर्थात् मुक्ति का मार्ग स्वतः प्रशस्त कर देता है। मन में इस प्रकार के दृढ़ विश्वास के साथ किये जाने वाले कार्य से मिलने वाला किसी प्रकार का परिणाम कष्टकारी नहीं होता अपितु हर स्थिति में कर्त्ता के मन मे संतुष्टि का भाव रहता है। कामना का अभाव जीवन के सारे अभावों को स्वतः समाप्त कर देता है। माया के बन्धन में जकड़े सांसारिक जनों के लिए इस पर विश्वास करना तथा इसके अनुसार मन को दृढ़ बनाना एक कठिन कार्य है तथा कठोर अभ्यास की आवश्यकता है। नैराश्य को समाप्त कर सकारात्मक सोच में वृद्धि करने के लिए यह एक अचूक औषधि है जो सभी कष्टों के निवारण में समर्थ है। युद्ध के मैदान में मोह से ग्रसित अर्जुन का नैराश्य उन पर इतना प्रभावी हो गया था कि उन्होनें स्पष्ट शब्दों में युद्ध करने तथा अपने ही बन्धु–बांधवों को मारने से मना कर दिया था। वस्तुतः वह अर्जुन के नकारात्मक विचार ही थे जो उनको कर्त्तव्य मार्ग से विमुख कर रहे थे। कृष्ण द्वारा जीवन का रहस्य तथा कर्म के मर्म को भली–भाँति समझाये जाने के कारण उनका नैराश्य समाप्त हुआ तथा वह कर्त्तव्य पथ पर पुनः अग्रसर हुए :

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वाप्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोस्मि गत सन्देहः करिष्ये वचनं तव।।
(गीता 18/73)

मोह नष्ट होना तथा स्मृति प्राप्त कर लेने का अर्थ यह निकलता है कि स्वजनों के प्रति आसक्ति ही उनके अन्दर की शक्ति को क्षीण कर रही थी जिसके दूर होते ही उनका संशय समाप्त हो गया तथा उन्हें कर्त्तव्य बोध प्राप्त हो गया था।

आज के वैज्ञानिक युग में चमक–दमक तथा भौतिक उन्नति को ही वास्तविक उन्नति मान बैठे हम सांसारिक जनों का ध्यान आध्यात्मिक चिंतन से हट गया है और यही कारण है कि भौतिक सुख के अनेकों संसाधन जुटा लेने के बाद भी वह वास्तविक सुख से वंचित हैं। परिणामस्वरूप नैराश्य, मनोमालिन्य, वैमनस्य, ईर्ष्या तथा आत्महत्या की घटनायें दिनों–दिन बढ़ती जा रही हैं। जबकि सारी खुशी अपने अन्दर है, केवल वृत्ति को बदलने की आवश्यकता है :

दौड़ सके तो दौड़ ले, जब लगि तेरी दौड़।
दौड़ थम्या, धोखा मिट्या, वस्तु ठौड़-की-ठौड़।।

ईश्वर में अटूट विश्वास के साथ जो कार्य हमें मिला है उसे पूरे मनोयोग से करें तथा सामर्थ्य अनुसार परमार्थिक कार्यों में संलग्न रहें तथा सभी के प्रति आदर का भाव रखें, सबमें ईश्वर का अंश देखें तो दृष्टि नकारात्मक से सकारात्मक हो जाती है तथा मन तनाव मुक्त होकर सहज हो जाता है :

यदृच्छा लाभ सन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धा व सिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते।।
(गीता 4/22)

जब कभी मन विचलित हो तो गीता की उपर्युक्त पंक्तियों का मनन कर लेने से मार्ग मिल जाता है तथा नकारात्मकता अपने आप तिरोहित हो जाती है, इसमें दो राय नहीं है।

गालिब की दो पंक्तियों में जीवन का निचोड़ समाहित है जिसे हृदयंगम करना आवश्यक है :

लायी हयात आये, कजा ले चली चले।
न अपनी रजा से आये न अपनी रजा चले।।

सकारात्मक सोच वाले व्यक्ति की नजर हमेशा गिलास के आधे भरे हुए भाग पर रहती है न की आधे खाली भाग पर। परमात्मा ने हमें इतना आनन्ददायक वातावरण दिया; इतनी सुन्दर दुनिया बनायी; पर्वत, नदियाँ, समुद्र, हवा, सूर्य की रोशनी तथा जीवनोपयोगी आवश्यकता की सम्पूर्ण चीजें प्रदान की; फिर फिक्र किस बात की। जो हुआ वह अच्छा हुआ; जो हो रहा है वह भी अच्छा हो रहा है तथा जो होगा वह भी अच्छा होगा। ऐसा दृढ़ विश्वास बन जाये तो जीवन में आनन्द और मधुरिमा अपने आप भर जायेगी। इसमें कोई संदेह नहीं हैं।

पत्नी-श्री प्रभाकर दुबे
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

स्वतंत्रता दिवस समारोह, 2013

रक्तदान शिविर, 2013

हिन्दी पखवाड़ा, 2012

जब याद हमारी आई होगी

अलका श्रीवास्तव

कितनी रातें गंवायी होंगी।
कितने ख़्वाब सजाये होंगे।
हर आहट एक धड़कन
फिर बन आयी होगी।
हर पल बीता होगा सदियों सा
जब याद हमारी आयी होगी। जब याद हमारी आई होगी।

इन्कार करोगे तो भी, मज़बूरी होगी।
इक़रार करोगे फिर भी, मज़बूरी होगी।
मज़बूरी के उन लम्हों में,
नयनों को अश्कों से भिगोया होगा। हर पल बीता होगा सदियों सा।

सूख चुके होंगे जब अश्क तुम्हारे
कुछ तो सुकून मिला ही होगा।
फिर तस्वीर हमारी लेकर
होठों से उसे चूमा ही होगा। हर पल बीता होगा सदियों सा।

मेरी बेज़ान तस्वीरों को ही फिर
अपना दर्द सुनाया होगा।
बेबस हो, बिस्तर पर लेट
मेरी तस्वीर को सीने से लगाया होगा। हर पल बीता होगा सदियों सा।

पत्नी - श्री प्रवीण कुमार श्रीवास्तव
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

ज़िन्दगी में सदा मुस्कुराते रहो

सूर्यपाल
लेखापरीक्षक

ज़िन्दगी में सदा मुस्कुराते रहो,
फ़ासले कम करो दिल मिलाते रहो।
दर्द कैसा भी हो आंखें नम न करो,
रात काली सही कोई ग़म न करो
इक सितारा बन जगमगाते रहो।
ज़िन्दगी में सदा मुस्कुराते रहो।
बांटना है अगर बांट लो हर खुशी,
ग़म न ज़ाहिर करो तुम किसी पर कभी
दिल की गहराई में ग़म छिपाते रहो
ज़िन्दगी में सदा मुस्कुराते रहो।
अश्क अनमोल हैं खो न देना कहीं
इसकी हर बूंद है मोतियों की लड़ी
इसको हर आंख से तुम चुराते रहो
ज़िन्दगी में सदा मुस्कुराते रहो।

एक मरियल से युवक ने ब्लड डोनेशन पर ज़ोरदार भाषण दिया
और अपने साथियों को लेकर अस्पताल गया।

सबसे पहले वह अपना ब्लड देने रूम में गया, जब बड़ी देर तक वह बाहर नहीं आया
तो साथियों ने डॉक्टर से पूछा।

डॉक्टर ने खीज़कर कहा अरे हमने चार बूँद खून लिया, वह बेहोश हो गया
अब दो बोतल चढाया तब कहीं जाकर होश में आया है।

मज़बूर

अश्विनी कुमार पाण्डेय
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

उसकी आँखों में फ़लसफ़ों का दवाब कभी पल नहीं पाता
पाँव में इस क़दर बेड़ियां हैं कि वह निकल नहीं पाता
बदलने को तो वो बदल दे सारी दुनिया की रवायतें
होकर मज़बूर अपने हालातों से वह कुछ बदल नहीं पाता
कभी रोक लेती हैं माँ की दुआएं, कभी बीवी का प्यार
कभी बच्चों की सिसकारियाँ, कभी राखी का त्योहार
कभी भूख कर देती है बेबस उसे, कभी पैसे से लाचार
तो खाँसता हुआ उसकी बाँहें, पकड़ लेता है बाप बीमार
इन सब से इतना घिरा है कि सम्भल नहीं पाता
होकर मज़बूर अपने .....
कभी चाहा था, सब कुछ छोड़कर चल पड़ता हूँ
ये मोहमाया की दीवार, तोड़कर निकल पड़ता हूँ
पर सोचता हूँ क्या जाता है मेरा, जब लुटता है कोई देश
मैं क्यूं अनायास ही इस बात पर झगड़ पड़ता हूँ
मैं तो दुनिया से लड़कर भी रहने के लिए महल नहीं पाता
होकर मज़बूर .....
कभी भी उसके हिस्से का, उसे मिल नहीं पाता
हँसी की बात नहीं है, उसका चेहरा भी मिल नहीं पाता
कि इस कदर बेबस हो गई है, उसकी ज़िन्दगी
कि अपने दिल के ज़ख़्मों को, वह सिल नहीं पाता
दिनभर की कमाई से उसके घर का चूल्हा जल नहीं पाता
होकर मज़बूर .....
किस तरह इस रहगुज़र से, वह गुज़र सकता है
किस तरह हालातों से निकल कर, रणभूमि में उतर सकता है
वो लड़े अपने हालातों से या दुनिया के जुल्मों से
जुल्म की इस आंधी में, कैसे ठहर सकता है
सदा काँटों का ताज़ मिला है, कभी वो कमल नहीं पाता
होकर मज़बूर अपने हालातों से वह कुछ बदल नहीं पाता

तुम बरसो

महेन्द्र तिवारी
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

अब के सावन में ये आस बुझनी चाहिये,
तुम बरसो या मेघ से, ये प्यास बुझनी चाहिये।

रहो खामोश कि बहारें गुनगुनाने लगी हैं,
इन्हीं तरानों से नई राग बननी चाहिए।

ये बेबसी ये तन्हाई ये मायूसी ये दीवानापन मेरा,
आ जाओ अब पास मेरे कि ये अरदास मिटनी चाहिये।

कोई कहे और कोई सुने, हो जाये काम मेरा,
इस सुकूने फिजाँ में एक आवाज़ लगनी चाहिये।

जी भर के देख लो मुझे, पर पा न पाओगे कभी,
इज़हारे इल्तज़ा के लिये निगाह उठनी चाहिये,

न हो कोई पशोपेश, न हो कोई रंजोग़म,
दिखाओ यूँ कि जिन्दगी आसान लगनी चाहिये।

सिपाही–''मिस्टर! साईकिल रोको इस में लाइट नहीं है''।
साईकिल वाला– हवलदार साहब! सामने से हट जाओ इसमें ब्रेक भी नहीं है।

बात ही कुछ और है

शरज़ील सलीम

सब्जी में आलू की
जंगल में भालू की
राजनीति में लालू की, बात ही कुछ और है।

कोयल की कुहुँ की,
त्यौहार में होली की,
बोली में भोजपुरी, की बात ही कुछ और है।

हृदय में संस्कार की
परिवार में प्यार की
क्रिकेट में हार की, बात ही कुछ और है।

महाभारत में वीरों की
अंकों में जीरो की,
फिल्मों में हीरो की, बात ही कुछ और है।

सफर में रेलगाड़ी की
बनारस की साड़ी की
भारत में नारी की, बात ही कुछ और है।

पुत्र- मो. सलीम खान
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

चित्रकार– मैंने तुम्हारे बैल का चित्र दो हजार में बेच दिया है।
किसान– लोग कैसे मूर्ख हैं इतने में तो मैं बैल ही दे देता।

पापा की प्यारी

रश्मि दुबे

पापा की प्यारी होती हैं बेटियाँ।
जो मन में आता है, पापा से कह जाती हैं बेटियाँ।
पापा के कंधे चढ़कर ऊँचाईयाँ छूती हैं बेटियाँ।
इसीलिए तो पापा की शान कहलाती हैं बेटियाँ।
घर से विदा होते समय सबसे ज्यादा, पापा को रूला जाती हैं बेटियाँ।
शादी के बाद सबसे ज्यादा, पापा को याद आती हैं बेटियाँ।
पापा की आँखों का तारा होती हैं बेटियाँ।
यदि मौका मिला तो इन्दिरा गाँधी, कल्पना चावला बन जाती हैं बेटियाँ।
इसलिए कहना है, मत दूर करो इस जग से बेटियों को।
पापा का नाम जग में, ऊँचा कर जाती हैं बेटियाँ।
बेटियों बिना यह जग होता है अधूरा।
इस जग को पूरा करती हैं बेटियाँ।

सुपुत्री-प्रभाकर दुबे
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

यदि आप अपने बच्चे को जीनियस बनाना चाहते हैं तो उसे परियों की कहानियां सुनाइए और अगर और अधिक जीनियस बनाना चाहें तो उसे और अधिक परियों की कहानियां सुनाइए।

– अल्बर्ट आइन्स्टाइन

आजादी के बाद का भारत

अजय त्यागी
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

हाय भारत तेरी अज़ब कहानी, सुनो अपने यार की जुबानी।
हाय देश की दुखभरी कहानी।।
जिस देश में गंगा बहती है, जो देवों की भूमि है।
ये देश है वीर जवानों का, गाँधी का, किसानों का।।
जिस देश में लाल लुटाये थे माँओं ने, भाई खोए बहनों ने।।
हँसते–हँसते सूली पर लटके थे शहीदे–आजम।
सीने पर खायी थी गोली आजाद ने।।
परन्तु जय किसान, जय जवान का नारा।
आज कितना गलत प्रतीत होता है।।
आज न हमारा जवान सुरक्षित है, न ही हमारा किसान सुरक्षित है।
हाय भारत तेरी अजब कहानी, सुनो अपने यार की जुबानी।।
जिस देश में माँ–बहन की आजादी खतरे में है, उस देश की हालत क्या होगी।
जिस देश में भ्रष्टाचार, बेरोजगारी चरम पर हो, उस देश की हालत क्या होगी।
जिस देश का बचपन भूखा हो, उस देश की जवानी क्या होगी।।
क्या गाँधी ने, नेहरू ने, आजाद ने इसी देश की कल्पना की थी।
आज हाय शर्म आती है कि हम भारत देश के वासी है।।
जहाँ पल–पल भुखमरी है, गरीबी है, बेरोजगारी है, महँगाई की आग है एवं आम आदमी की लाचारी है। हाय भारत तेरी अजब कहानी, सुनो अपने यार की जुबानी।।
इस देश में जीकर ऐसा लगता है कि वक्त से लड़ना सीखो तुम, राहो में तुम्हारी आँधी है, तूफानों से लड़ना सीखो तुम, शैतान से लड़ना सीखो तुम, हैवान से लड़ना सीखो तुम, जमाखोरों एवं मिलावट खोरों से लड़ना सीखो तुम, औरत की आबरू से जो खेले उन समाज के भेड़ियों से लड़ना सीखो तुम।।
हाय भारत तेरी अजब कहानी, ये है जीवन की कड़वी सच्चाई, जीवन की इस हकीकत से लड़ना सीखो तुम।

भ्रष्टाचार का वायरस

प्रभाकर दुबे
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

भ्रष्ट आचरण करने को,
कहाँ सही कह पाना है।
यह तो है कलंक मानवता का,
सबको इसे मिटाना है ।।1।।

सत्य धर्म का पालन तो,
शाश्वत है, स्थायी है।
बनता जीवन निर्मल इससे,
होती नहीं हँसाई है ।।2।।

मन मलिन, कलुषित विचार
कारण यही बनाते हैं।
भौतिकता की अंधी दौड़,
भ्रष्टाचार कराते हैं।।3।।

न्याय बना अन्याय का डेरा,
देश गया अँधियारे में।
राह नहीं अब बाकी कोई,
कैसे रहें उजाले में।।4।।

राजनीति का कठिन है फंडा,
लूटो, खाओ इनका धंधा।
कैसे करें परीक्षा इनकी।
जान पर आफत आनी अब।।5।।

कोल ब्लॉक से काला होकर,
करते रहे कमाई सब।
काम कठिन कर्त्तव्य निभाना।
बची यही सच्चाई अब।।6।।

सीख गयी संदेश गया,
गाँधी का उपदेश गया।
क्या सी.एम. और क्या पी.एम.
सब जग में नाम हँसाते हैं।।7।।

सह लिया अन्याय बहुत अब,
जन–जन में जागृति लाना है।
सबल राष्ट्र बनाना है तो,
भ्रष्टाचार मिटाना है।।8।।

फूलों और शूलों की बातें

अरविन्द कुमार उपाध्याय
लेखापरीक्षक

हर रोज की भाँति मैं तड़के सैर करने को चला
वही अँधेरा, वही पेड़–पौधे और वही रास्ता मिला।

लेकिन आज कुछ आवाजें अलग से आ रहीं थीं
शायद मेरे कुछ जल्दी निकलने की याद दिला रहीं थीं।

मेरे कदम इनको अनसुना कर आगे न बढ़ सके
आवाजों की ओर चले कि उनका सबब समझ सकें।

बड़ी मुश्किल से शब्दों के स्रोत के पास पहुँच गया
लेकिन मंजर देख मैं बुरी तरह से उलझ गया।

आवाजों को करीब से सुना तो होश उड़ गये
मानो मन के नीले अम्बर पर काले मेघ उमड़ गये।

फूलों का क्रन्दन और शूलों का हँसना सुनाई पड़ा
खुशबू का भय और काँटों का शौर्य दिखायी पड़ा।

डरे, सहमे और सिमटे फूल विलाप करते नज़र आये
निडर और संगठित शूल उन्माद में शंखनाद करते नज़र आये।

कुछ और पास गया तो शूलों के शब्द साफ हो गये।
सारे शूल एक स्वर में बोल रहे थे
सभी फूल अपना आत्मविश्वास टटोल रहे थे।

शूलों ने अपने गठबंधन की ताकत बढ़ा ली थी
फूलों ने अपनी शक्ति अविश्वास की बलि चढ़ा ली थी।

शूलों के दल ने और मुखरित स्वर में फूलों से कहा।
तुम्हारी सूरत तो वही हैं पर सीरत बदल गई है
खुशबू भी नहीं रही और हालत भी बदल गई है।

अच्छा होगा हमारी जमात में शामिल हो जाओ
भूखों, लाचारों का भक्षण करो और अपनी सत्ता को फैलाओ।

क्यों एक–दूसरे को हँसते हुए छल रहे हो
तुम अब फूल से शूल में बदल रहे हो।

खुशबू पैदा करने वाली हवा, जल और मिट्टी
अब दूषित हो चुकी है,
दुनिया में फैले जहर से अपनी संजीवनी खो चुकी है।

तभी कुछ आहटों ने दिन निकलने की याद दिलाई
अचानक शूलों–फूलों के संवाद की हो गई विदाई

पर इस संवाद ने मुझसे एक सवाल किया
हम भी तो काँटे बो रहे और ज़हर घोल रहें हैं
फूल से बच्चों को काँटों के हवाले कर रहे हैं।

अनाचार, अनैतिकता, स्वार्थ और लोभ का ज़हर
निश्चय ही इन शूलों को और बल देगा।

झूठी, अंधी, काली दुनिया में खोये ऐ मद मस्तों
जाग जाओ, वरना, तुम तो फिर भी काँटों के साथ जिये।

ये ज़हर तुम्हारी नस्लों को ही काँटों में बदल देगा
ये ज़हर तुम्हारी नस्लों को ही काँटों में बदल देगा।।

एक आदमी ने ईश्वर से पूछा, आपके प्रेम और मानवीय प्रेम में क्या अन्तर है। ईश्वर ने कहा, आसमान में उड़ता पंछी मेरा प्रेम है और पिंजरे में कैद पंछी मानवीय प्रेम है।

कष्ट सहने के फलस्वरूप ही हमें बुद्धि – विवेक की प्राप्ति होती है।

– डा. राधाकृष्ण

आपदा एवं तंत्र

प्रवीण कुमार श्रीवास्तव
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

आपदा, त्रासदी का ये मंजर
असह्य, अकल्पनीय, सिहरन सी।
जैसे गिरिराज हुए क्रोधित
और बादलों ने ली अंगड़ाई
नदियों ने जो रौद्र रूप लिया
घाटियों ने भी फन लहराया।

बिखर गई अट्टाहस करती अट्टालिकाएँ ताशों सी
हर जगह हर तरफ बस मातम ही छाया।
सिहर उठी पर्वत घाटी देवभूमि की
क्रन्दन की करुण आवाजों से,
सुन्दरता बिखेरती थी जो छटा
मलिन हुई लाशों के अंबारो से।

प्रश्न? प्रकृति ने क्यों किया अन्याय
मासूम, असहायों पर अत्याचार।
पर, असंख्यकों के लिए उसे भी तो जीना था।
शायद प्रकृति को अपना हक लेना था।

उजड़े सिंदूर की मांगे
खोए बेटों की माँए
प्रश्न करतीं विकास के ठेकेदारों से
कब लाओगे, कैसे लाओगे
उनके जीवन की बैशाखी,
धर्म–आस्था की पावन डोर।

किंकर्त्तव्यविमूढ़ सहमी सी व्यवस्था
खड़ी घूँघट में मुँह छिपाये

ज़ालिम है, कातिल है, असभ्य है
है अपराधी हजारों मासूमों की।

रुदन, क्रन्दन, चीत्कारों से भी
तनिक ना शासन जिनका डोला
आशाओं की सांसों के उड़नखटोलों में
भूखों को राशन–जल नहीं, वी.आई.पी. का सैर हुआ।

किनसे आस लगाएं, क्या आस लगाएं
जिनकी बुनियाद है झूठ के ढेरों से
हजारों की मौत होती, गिनती होती, सैकड़ों में
बचाव होता सैकड़ों में, गिनती होती हजारों में।

भंयकर त्रासदी की इस बेला में,
सच भी जिनको बेमानी लगता हो
आँखों में शर्म नहीं, आँसू बहाते घड़ियाली
धिक्कार है ऐसी व्यवस्था पर,
धनलोलुपता से मदचूर, मदमस्त हाथी से,
नहीं परवाह मानवता की

प्रकृति से खेलना ही फितरत है।
खनन माफियाओं से मिलकर
धरती का सीना छलते हैं।
आफत हो या हो त्रासदी
शतरंज बिछाये रहते हैं।
उसका पैदल, मेरा पैदल
कौन वज़ीर है घेरे में।

जनता तो बेचारी है
गिरती है फिर संभल जाती है।
मेरी कुर्सी रहे सलामत,
आपदा में ही तो आपदा राहत से
तिज़ोरी भरी जाती है।
कैसे पानी दे, पानी को तरसते बेबस को
10 बिसलेरी संग प्लानिंग की जाती है,
प्लानिंग हकीकत में आने तक बेबस की जान चली जाती है।

धन्य हो उन सैन्य जवानों को
जो विषम में भी सम होते हैं।
शासन किसका, कुर्सी किसकी, परवाह नहीं
बस मानवता ही पहचान है।
संकट चाहे जैसे हों, बस
वही आपदा के भगवान हैं,
बस वही आपदा के भगवान हैं।

पेड़ की शाखा पर बैठा पंछी कभी भी इसलिए नहीं डरता कि डाल हिल रही है,
क्योंकि पंछी डाली में नहीं अपने पंखों पर भरोसा करता है।

– सुभाषित

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है

– महात्मा गांधी

हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत हैं, जिनके बल पर वह विश्व की
साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में आसीन हो सकती हैं।

– मैथिलीशरण गुप्त

कलयुग का चरमोत्कर्ष

अरविन्द कुमार उपाध्याय
लेखापरीक्षक

करना भगवान का दर्शन था,
अवसर बड़ा ही पावन था,
सबने कहा–इस मुहूर्त में जो माँगोगे, पाओगे,
वरना जीवन भर पछताओगे,
मैं भी नास्तिक कहे जाने के डर से मन्दिर गया,
पर क्या देखा! कतार बहुत बड़ी थी,
सारे ब्रान्ड की गाडियां खड़ी थीं।
भगवान और भक्त, दोनों नये वस्त्रों से सजे थे,
पंडित जी का क्या कहना, उनके तो मज़े ही मज़े थे,
मंदिर का हर कोना चढ़ावे से भरा था,
पंडित जी का मन आज, रोज़ से अधिक हरा था।
भक्तों में अमीर, अभिनेता, अपराधी, नेता सबसे आगे थे,
गरीब और आम आदमी आज भी अभागे थे।
जिससे डरते थे वही बात हो गयी
हमारी बारी आते–आते आधी रात हो गयी
भगवान तब तक सो चुके थे
हम अपने भाग्य का खज़ाना खो चुके थे।
रसूख़ वालों ने यहां भी बाज़ी मार ली
आम आदमी के हिस्से यहां भी कतार मिली ।
मैं नास्तिक से आस्तिक हो गया, क्योंकि
मंदिर में मुझे सत्य का दर्शन हो गया ।
अमीर की अमीरी और गरीब की गरीबी
दोनों का विकास हो रहा है,
कलयुग का चरमोत्कर्ष ही होगा,
भगवान का खज़ाना भी अमीरों की अमीरी में नाश हो रहा है
भगवान का खज़ाना भी अमीरों की अमीरी में नाश हो रहा है।

आज के हालात देखिये!

हिना सलीम
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

आज के हालात देखिये,
धन, बल का कारोबार देखिये,
मेहनतकशों पर होता अत्याचार देखिये,
यू.पी. में बनी मुलायम सरकार देखिये,
मायावती का खत्म होता व्यापार देखिये,
गली–गली में बेरोजगारों की भरमार देखिये,
दिन–प्रतिदिन घोटालों की मार देखिये,
जयललिता का आड़वानी से प्यार देखिये,
सोनिया की आड़वानी को ललकार देखिये,
मीडिया में राजनीति पर होती तकरार देखिये,
घर में रोती माँ–बहनों की किलकार देखिये,
सीमा पर जवानों का बलिदान देखिये,
मन्दिरों में चोरों का चमत्कार देखिये,
गाँव–2 में महिलाओं का श्रृंगार देखिये,
शहरों में सभ्य लोगों का व्यवहार देखिये
नारी के प्रति होता अत्याचार देखिये,
आँखें खोलकर आज के हालात देखिये,
मोबाइल पर होता विनाशकाल प्रचार देखिये,
पर्यावरण का होता नाश देखिये,
जंगलों का होता विनाश देखिये,
महासागरों का बढ़ता जलस्तर देखिये,
मौसम का बदलता प्रभाव देखिये,
पैसों की बढ़त से घटता शिक्षा का अभाव देखिये
आज के बदलते हालात देखिये।

ज़िन्दगी और मौत

सन्दीप सिंह
प्रधान निदेशक
क्षेत्रीय प्रशिक्षण संस्थान (रांची)

मौत ज़िन्दगी से हार जाती है
क्योंकि ज़िन्दगी मौत के पार जाती है
तभी तो कई दास्तानों के बाद
लौट के फिर वही बहार आती है

यह शरीर जल के मरता है
आदमी यह देखकर डरता है
शून्य नहीं आखिरी सच
शून्य के पीछे एक होशपूर्ण कर्त्ता है

तो क्यों करते हो गम आने–जाने का
क्यों दुःख खोने–पाने का
जब गीत और गीतकार वो
तो ढूँढें क्या गन्तव्य गाने का

जब स्थिर है आत्मा तो क्या फर्क, मन चलता रहे
तेल अंतहीन तो लौ जल–जल कर जलता रहे
कल फिर क्षितिज से उभरेगा
आज सूरज ढल–ढल के ढलता रहे।

हिन्दी ज्ञान मेरे लिए अमृतपान है, जितनी बार उसे पीता हूं,
उतनी बार लगता हैं, पुनः जीता हूं।

– डॉ. ओदेलोन स्मेकल

पर्वत की नारी

हिना सलीम
वरिष्ठ लेखापरीक्षक

दहल गया हृदय मेरा
देख पर्वतीय नारी की दशा
जीवन अपना रख दाँव पर
लेने गयी पशु का चारा,

पीठ पर बोझा, सर पर टोकरी
हाथ में हँसिया, चेहरे पर मुस्कान
काट रही है जटिल जीवन अपना
जुटाने में दिनचर्या का सामान,

पहाड़ तले दरिया न देखे,
मदमस्त हुई अपनी धुन पर,
मैंने देखा, छुपकर
हुई भयभीत कहीं गिर न जाये
जिसका संघर्ष जीवन मौत से विकट पहाड़ पर पग बढ़ाये
स्व जीवन की परवाह नहीं,

परिजनों को उसकी चिंता नहीं
जिनकी चिन्ता में चिता
चढ़ने को तैयार
क्या पर्वतीय नारी जीवन
का कोई मोल नहीं?

पाखंडी संत

सन्दीप सिंह
प्रधान निदेशक
क्षेत्रीय प्रशिक्षण संस्थान (रांची)

यह सब संत हैं
कहते हैं हम जीवन का अंत हैं
पर चाहते हैं यह वोट
और इसमें क्या खोट
कि दिव्य ट्रस्टों में
भर जाये बहुत से नोट
इन पर भगवान की छाया
देखी इनकी पवित्र माया
जानते यह सब, कौन कितना ले गया
कौन कितना लाया
यह हैं ज्ञानी
यह हैं ध्यानी
नफरत से परे हैं
कितनी इनकी मीठी वाणी!
कहाँ दिखाओगे सही कर्म
जब यही तुम्हारा धर्म
नफरत और बाँटना जो सिखाता है
क्या वह धर्म कहलाता है
तुम कैसे हो हिन्दु
जब जानते नहीं की पहली बिन्दु
है धर्म, जिसका मार्ग सर्वव्यापी जोड़ता है
न की हिस्सों में तोड़ता है
अगर तुम्हें मस्जिदों में न दिखें भगवान
और मंदिरों में अल्लाह
तो तुमने क्या पाया
तुम्हें मिलेगी सिर्फ खोखली काया
और इस जगत की जय
चुनावों में फतह
एक पल की जीत और सुख
और फिर अंत–हीन भय और दुःख
क्योंकि तुम कहते हो अपने को संत
तुम्हें सिखाना चाहिये जीवन का अंत
पर तुम हो भोगी
डॉक्टर बने फिरते हो
सब के सब हो रोगी।

ज्ञान का लक्ष्य सत्य है और सत्य आत्मा की भूख है।

– लेसिंग

पाठ्यक्रम परिवर्तन

सत्यभामा पाण्डेय

अभी–अभी हाल फिलहाल में इसी साल के दौरान
छात्रों के पाठ्यक्रम परिवर्तन के सुझाव ने कर दिया हैरान
बड़ी–बड़ी संस्थाओं ने सुझाव दिया और किया प्रयास
कि यदि करना है छात्रों के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास
तो इस पुरानी नैतिक शिक्षा की किताब तोड़नी होगी
और नये पाठ्यक्रम में एक नई किताब जोड़नी होगी
किताब का नाम होगा, देश का कैसे करें उद्धार
किस तरह भाँति–भाँति के किये जायें भ्रष्टाचार
पाठ्यक्रम में हों साँठ–गाँठ के विभिन्न प्रकार
और मिलकर किस प्रकार बढ़ाये जायें व्यापार
कि किस तरह लूटा जाता है अपने द्वारा अपनों को
किस तरह सच किया जाता है अपने सपनों को
किस तरह किसी नेता की बेटी का पति बना जा सकता है
किस तरह रातों–रात रोड़ से करोड़पति बना जा सकता है
कि किस तरह संचार को तार–तार किया जाता है
किस तरह देश की सभ्रभुता पर वार किया जाता है।
किस तरह बहुरूपिये सफेद पोशों के वेश में
अपनी स्वार्थ सिद्धी के लिए चुभ रहे हैं देश में
किस तरह सब खाकर डकार लिया जाता है
किस तरह किसानों की जमीन उधार लिया जाता है
किस तरह दाग लगे कुरतों को साफ किया जाता है
किस तरह देशद्रोहियों से इसांफ किया जाता है
किस तरह गांधी के उसूलों को भूला जाता है
किस तरह अय्याशी के झूलों को झूला जाता है
ऐसी बातें सीखकर जब बच्चे आयेंगे
सच कहती हूँ देश का मान ही बढायेंगे
और कहीं हो या न हो हमारा नाम, गम नहीं
भ्रष्टाचार में हम जरूर अपना नाम अमर कर जायेंगे।

पत्नी- श्री अश्विनी कुमार पाण्डेय
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

बढ़ते मानवीय हस्तक्षेप की सीमा एवं समस्याए

कु. रेखा
कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसरित मानव ने स्वंय भी नहीं सोचा होगा कि अफ्रीका के इन घने जंगलों से शुरूआत करके वह एक दिन आकाश की ऊँचाईयों को छू रहा होगा। उस वन मानव ने यह कभी नहीं सोचा होगा कि हमारी आने वाली पीढ़ियाँ इस प्राकृतिक धरोहर, धरती–आकाश और स्वंय के बंधु–बांधवों का दोहन इस कदर करेगीं कि इनके अस्तित्व का प्रश्न ही खड़ा हो जाएगा। मनुष्य के खोजी स्वभाव ने उसे निरन्तर बढ़ने, तीव्रगति से जानने की उसकी उत्सुकता को हमेशा दोगुना बनाए रखा है। उसने पृथ्वी के हर क्षेत्र में अपने कदम रखने शुरू किए और फिर रूकने का नाम ही नहीं लिया। तब से बढ़े ये कदम वर्तमान में 'सब कुछ' हासिल कर लेने के बाद भी बढ़ते ही जा रहे हैं। अब क्या चाहता है मनुष्य.....? उसकी हस्तक्षेपवादी प्रवृत्ति ने कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रखा है। मनुष्य ने प्राकृतिक जगत में अपने हस्तक्षेप के कारण आज इतनी विकराल समस्या उत्पन्न कर दी है कि विश्व के लोग डरे–सहमे हैं। बेचारे जीव–जन्तु, जिनमें सृष्टि का पाचवाँ तत्व अर्थात् 'बुद्धि' नहीं है, जो केवल मानव के ही पास है, मानव की बढ़ती लिप्सा से काल–कवलित होते जा रहे हैं। जीव–जन्तुओं का शिकार, तस्करी, व्यापार आदि में धड़ल्ले से दुरूपयोग हो रहा है। जो जीव कभी उन्मुक्त भाव से पृथ्वी पर अपना अधिकार समझते हुए विचरण करते थे, उन्हें आज एक सीमित क्षेत्र में प्राकृतिक दशाओं की कृत्रिम स्थिति में रखा जा रहा है।

पेड़–पौधे, वनस्पतियाँ जो आज भी मानव जीवन का आधार हैं, मानव शायद यह भूल चुका है की अँधाधुंध कटाई व दोहन से वह स्वंय अपने भविष्य पर, अपनी पीढ़ियों पर कुठाराघात कर रहा है। घने वन, जिनका अस्तित्व मानव देखना ही नहीं चाहता है, के स्थान पर आज कंक्रीट के जंगल खड़े किए जा रहे हैं। खेती योग्य कृषि भूमि को भी आवास स्थल के रूप में परिवर्तित किया जा रहा है। फसलों के उत्पादन के लिए मनुष्य इंतजार न करके, मेहनत न करके, केवल कीटनाशक पदार्थों का भरपूर उपयोग कर रहा है, जिससे अनेक जैविक पदार्थों का नष्ट होना स्वाभाविक है। मनुष्य सब 'तुरन्त' प्राप्त कर लेना चाहता है। इसलिए उसने जीवों के व्यापार को अधिक लाभपरक समझा और इसी से शुरू हुआ जंगली जीव–जन्तुओं का व्यापार। एक ओर तो कृषि में उत्पादन नहीं हो रहा है तो दूसरी ओर, जीव–जन्तुओं पर निर्भरता बढ़ रही है।

कोई भी ऐसा जानवर या जीव नहीं है, जिसको मानव की महत्वकांक्षा ने छोड़ दिया हो। अनेक जीव लुप्त हो चुके हैं, अनेक संकटग्रस्त हैं। मनुष्य इन जानवरों की खाल, सींग, हड्डियों, बालों का व्यापार कर रहा है। आए दिन जंगली जीवों के अवैध व्यापारी पकड़े जाने की खबरें

आती हैं। मानव ने जंगलों को तो छोड़ा ही नहीं बल्कि उस स्थान पर रहने वाले आदिवासी व जनजातीय समुदाय को भी वहाँ से खदेड़ना चाहता है। सभ्यता से कोसों दूर रहने वाले ये लोग मनुष्य के स्वार्थ की बलि चढ़ रहे हैं। इनके वास स्थानों पर मानवीय हस्तक्षेप नवीन नहीं है बल्कि यह उपनिवेशी काल से ही प्रारम्भ हो गया था, जब साहूकारों, व्यापारियों ने ललचाई दृष्टि से इनका शोषण करना शुरू किया था। हालांकि ये लोग जानवर नहीं हैं बल्कि मानव के ही जात–भाई हैं परन्तु ये पिछड़ गए हैं, सभ्यता की चकाचौंध से अछूते रह गए हैं। अतः इन पर मानव की दृष्टि तो पड़नी ही थी। समय–समय पर इन लोगों के शोषण की घटनाएं चर्चा में बनी रहती हैं। मनुष्य इन लोगों का अस्तित्व मिटाने पर तुला हुआ है तभी इनकी जनसंख्या में गिरावट आती जा रही है।

विश्व के विशाल क्षेत्र पर फैले समुद्रों को भी मानव ने नहीं बख्शा। देशों में अपना–अपना आधिपत्य जमाने की होड़ सी लगी हुई है। समुद्र को मानव ने व्यापार, खोजें तथा दूसरी दुनिया देखने के उद्देश्य से लाँघने का प्रयास किया था लेकिन आज यह देशों के बीच युद्ध की स्थिति उत्पन्न करने वाला बन गया है। समुद्र में निरन्तर बढ़ते परिवहन ने समुद्री जीव–जन्तुओं के अस्तित्व पर भी संकट खड़ा कर दिया है। कभी तेल रिसाव के कारण, कभी टकराव के कारण मत्स्य वर्ग के मरने की खबरें आती रहती हैं। अनेक समुद्री जीव भी लुप्त हो चुके हैं।

मानव का यह हस्तक्षेप पृथ्वी को रुलाने के लिए काफी नहीं था इसलिए उसने आकाश को भी उसकी सीमा बताने का जिम्मा उठा लिया। चाँद को भी यह डर सता रहा है कि कहीं यह स्वार्थी मानव मुझ पर न आ बसे। पृथ्वी पर फैले प्रदूषण ने वातावरण व हवाओं को भी सड़ने को मजबूर कर दिया है। आकाश में बढ़ते गमनागमन के कारण अंतरिक्ष वासियों को मानव दैत्याकार राक्षस दिखाई देने लगा है, जो निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है और वो हमेशा डरे–डरे रहते हैं कि न जाने कौन सी मिसाइल हमें नष्ट करने के लिए बनी हो। हथियारों की होड़, वायुयानों की होड़, मिसाइलों की होड़, एक से बढ़कर एक उपग्रह छोड़ने की होड़ बढ़ती जा रही है। पृथ्वी से बाहर जाकर देखा जा सकता है कि आकाश में अनगिनत उपग्रह (कृत्रिम) वहाँ रहने वाले जीवों से भी ज्यादा होंगे।

इस प्रकार मुनष्य के इस हस्तक्षेप की प्रवृत्ति ने उसे बलशाली बना दिया है। इस प्रवृत्ति को पुष्ट करने के भी ढेर सारे कारण हैं। सबसे बड़ा और अहम कारण है–स्वार्थ। मनुष्य के स्वार्थ ने ही सारा समीकरण बिगाड़ दिया है। मनुष्य कर्मठ नहीं बल्कि स्वार्थ के वशीभूत होकर काम कर रहा है। बढ़ता जनसंख्या दबाव, कम पड़ते संसाधन तथा जो हैं उनका दोहन अनुचित प्रकार से हो रहा है। कृषि में उत्पादन करना नहीं चाहता है, फिर पेट भरने के लिए चोरी–चकारी की जरूरत पड़ती है और यहीं से शुरू होता है सारा खेल। प्राकृतिक जीव–जन्तुओं, वनस्पतियों, पेड़–पौधों, जंगल–जमीन, पहाड़, झरने, नदी–नाले, झील, तालाब, समुद्र सबके दोहन के पीछे भौतिकता के वशीभूत हुए मानव की महत्वाकांक्षाएं हैं। जिनके पास पर्याप्त है वे आने वाली पीढ़ियों के लिए रखना चाहते हैं, जिनके पास नहीं है वे गुजारे के लिए प्रयत्न करते हैं। कृषि

भूमि और भी कम पड़ती जा रही है अतः अन्न उत्पादन या तो होता नहीं है और होता भी है तो पर्याप्त नहीं। इसलिए आवश्यकता पड़ती है जीवों पर निर्भरता की।

इस बढ़ती महत्वाकांक्षा के परिणाम तो आने शुरू हो ही चुके हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण मौसमिक दशाएँ बदल गई हैं। जहाँ वर्षा नहीं होती थी वहाँ हो रही है, जहाँ होती थी वहाँ कम हो रही है, ग्लेशियर पिघल रहे हैं, समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है, वनस्पतियाँ व जीव–जन्तु विलुप्ति की कगार पर हैं। ओजोन परत जो पृथ्वी का सुरक्षा कवच है, में छेद हो चुका है, सूर्य की गर्मी के दुष्प्रभाव और ज्यादा होने लगे हैं। बिन मौसम बरसात, अम्लीय वर्षा, जैविक वर्षा और न जाने कितनी प्रकार की वर्षा हो रही हैं। मानव की महत्वाकांक्षा विज्ञान के क्षेत्र में ज्यादा रोचकता से बढ़ रही है। उसने प्रतिरूप बनाने की कला (क्लोनिंग) पर महारत हासिल कर ली है जिसके खतरे सोचकर ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। न जाने इन वैज्ञानिक मनुष्यों की बुद्धि कब फिर जाए और ये क्या बनाकर खड़ा कर दें कोई नहीं जानता है। जहाँ तक इस हस्तक्षेप की सीमा का प्रश्न है तो वह अब मनुष्य के स्वंय के ही हाथ में है। क्योंकि इस बुद्धिमान सामाजिक प्राणी को नियंत्रित करने वाला कोई नहीं है। यह स्वच्छंद रूप से अपनी स्वतंत्रता का उपयोग कर रहा है। लेकिन फिर भी कहीं–न–कहीं मानवता के अंश अभी भी शेष हैं। मनुष्य की सीमाओं का ज्ञान प्रकृति भी उसे कराती रहती है, जब भूकम्प, सुनामी, चक्रवात, टॉरनेडो व तूफान द्वारा मनुष्य की आँखे खुलती हैं, जहाँ उसका कोई वश नहीं चलता है। इसका उदाहरण हमारे सामने है जहाँ 16–17 जून 2013 को केदारनाथ में भयावह आपदा से हम सभी का सामना हुआ। प्रकृति के कहर की इससे बड़ी त्रासदी और क्या हो सकती है? केदारनाथ जैसे धार्मिक स्थल, जिसका हमारे आध्यात्मिक जीवन में सदियों से एक अहम स्थान है, जहाँ की यात्रा करना हिंदू धर्म में पुण्य का कार्य समझा जाता है और जो इस पवित्र धाम की यात्रा कर लेता है वह अपने जीवन को पूर्ण समझ लेता है। इस दुर्गम स्थल तक, कुछ वर्ष पहले तक पहुँचना बहुत कठिन होता था, वहीं आज यह धार्मिक स्थल इतना सुगम हो चुका था कि अक्सर इसे तथाकथित उच्च वर्ग द्वारा एक सैर–सपाटे की तरह प्रयोग किया जाने लगा था। इस धार्मिक स्थल पर अनगिनत निर्माण कार्य, आवागमन, प्रदूषण इतना बढ़ चुका था कि प्रकृति को रौद्र रूप धारण करना पड़ा और एक बार फिर मनुष्य को उसकी सीमा बतानी पड़ी।

अतः मनुष्य के हस्तक्षेप में अभी भी बहुत गुजांइश है क्योंकि प्रकृति में अनेक रहस्य छुपे हुए हैं। जिनका उद्घाटन करने में मनुष्य को काफी वक्त लगेगा। मनुष्य की बढ़ती लिप्सा को प्रकृति अपने तरीके से सीमित कर देती है। अतः मनुष्य की इच्छा सर्वोपरि नहीं है। वह प्रकृति से बड़ा नहीं हो सकता है यही उसकी सीमा है। आखिर मनुष्य भी जानता है कि अकेला रहकर वह किस पर प्रभुत्व जमाएगा। प्रभुत्व जमाने के लिए भी भरा–पूरा संसार चाहिए, जो बना रहेगा .....।

मिठाई बनाम प्याज-टमाटर

प्रवीण कुमार श्रीवास्तव
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

समाज में जब भी कोई बदलाव आता है, उसका सबसे ज्यादा प्रभाव मध्यवर्गीय परिवारों पर पड़ता है और जब वह मुद्दा महँगाई जैसी चीजों का हो तो मध्यवर्गीय, खास कर नौकरी से आजीविका चलाने वाले हर मध्यवर्गीय परिवार पर यह कहानी सटीक बैठती है।

आज मेरे बेटे के मामा–मामी यानी मेरी श्रीमती के भाई–भौजाई रात भर ट्रेन का सफर कर सुबह पहुंचे। बैठक में हम लोग बैठकर चाय पी रहे थे तथा साथ ही साथ सुबह का पेपर भी पढ़ रहे थे। तभी मेरे साले साहब ने अपने बैग से एक पैकेट निकालकर टेबल पर रखा।

बेटा– पापा, देखो तो मामा कितनी ढेर सारी मिठाई लाए हैं।

श्रीमती जी– भईया, ये तो बहुत मंहगी वाली मिठाई लाये हो। अन्दर ही अन्दर भाई द्वारा लाये जाने की खुशी भी टपक रही थी।

मैंने अपने चश्मे के उपरी हिस्से से एक निगाह सब पर डाली और एक गहरी सांस लेकर अखबार की हेड लाइन पर निगाहें गड़ा दी।

श्रीमती जी– ऐसा लगता है आपको खुशी नहीं हुई। मैने साले की ओर मुखातिब होकर कहा कि इसकी क्या जरूरत थी।

साले साहब जी– अरे, ये तो जरूरी था। ये भी न लाता तो क्या लाता। मैंने अखबार एक तरफ रखा और समझाते हुए कहा। समय को देखकर काम करना चाहिए। एक तो मिठाई उस पर इतनी महंगी। नुकसान ही नुकसान।

साले साहब जी– जीजा जी, इसमें नुकसान की क्या बात है। खाकर तो देखिये। मजा आ जायेगा।

मैने कहा– भई मैं तो मिठाई न खा पाउंगा। एक तो आजकल मिलावट ज्यादा है और दूसरे मिठाई आदि खाने से डायबिटिज आदि होने का खतरा बना रहता है। अगर इसके बदले आप प्याज व टमाटर लाये होते तो हमें भी खुशी होती और आपकी मेहमान नवाज़ी भी हो जाती।

साले साहब जी– इससे मेहमान नवाज़ी का क्या रिश्ता।

मैने कहा- कभी–कभी अक्ल का भी इस्तेमाल किया करो। देखो आजकल प्याज–टमाटर के दाम बढ़ चुके हैं। सरकार तक संकट में आ गयी है। देश में लोग परेशान हैं। प्याज–टमाटर के बिना गृहणियों की रसोई बंद हो गयी और ऑफिस में भी लोग काम नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि जब खाने में स्वाद ही नहीं तो फिर खाना शरीर में लगता नहीं और वह मन लगाकर काम नहीं कर पाते। इसलिये खाली समय होने के कारण कभी सरकार हाय–हाय व कभी टी. वी. चैनलों पर इंटरव्यू देते फिर रहे हैं।

साले साहब जी- तो इसमें आप पर क्या फर्क पड़ा?

मैंने भी देश के आदर्श नागरिक का परिचय देते हुए प्याज व टमाटर का उपयोग बन्द कर रखा है जिससे सरकार पर ज्यादा बोझ न पड़े। आपने जो पैसे मिठाई पर खर्च किए अगर उसी के टमाटर व प्याज लाते तो कम से कम आपकी सब्जी में स्वाद भी आ जाता और मेरे द्वारा मेहमान नवाजी भी हो जाती। थोड़ा बहुत सलाद का भी मुंह देख लेते। वैसे भी मिठाईयों के कारण दूध मंहगा हुआ जा रहा है। जबसे प्याज–टमाटर महंगा हुआ है तब से उसके औषधीय गुणों की भी महत्ता बढ़ गयी है। अन्यथा तो वह घर की मुर्गी दाल बराबर की तरह ट्रीट की जाती थी। जब तक प्याज, टमाटर चलता, तुम्हारी दीदी यानी मेरी श्रीमती जी भी एक्टिव रहती और उनका किचन भी महकता रहता।

तुम्हारे जाने के बाद इस शिकायत से भी बचा रहता कि मेरा भाई आया तो प्याज–टमाटर भी कंजूसी से लाये। कहो, मुझसे सहमत तो हो सब लोग।

साले साहब जी- वाह ! जीजा जी वाह !, कितने दार्शनिक विचार हैं आपके! आप जैसे लोग ही तो देश के स्तम्भ हैं। आपने हमारी आंखे खोल दी है। काश, आपके विचार और लोगों तक पहुंच पाते और समाज का भला हो पाता।

डॉक्टर – तुम्हें मालूम होना चाहिए, मेरा अस्पताल केवल सात बजे तक खुलता है।
मरीज – जी मुझे तो मालूम है पर मुझे काटने वाले कुत्ते को मालूम नहीं था।

डॉक्टर– मैंने तुम्हें कल जो खाँसी की दवाई दी थी तुमने पी?
मरीज–दवाई इतनी कड़वी थी, मैंने सोचा इससे तो खाँसी ही अच्छी।

पश्चात्ताप

अजय कुमार मिश्रा
लेखापरीक्षक

हरिमोहन बाबू लकवाग्रस्त होकर चारपायी पर पड़े थे। बेटा अपनी पत्नी और बच्चों को साथ लेकर पिकनिक गया हुआ था। उन्हें प्यास लगी, तो उन्होंने बगल में स्टूल पर रखे पानी का गिलास उठाने का प्रयास किया, परन्तु गिलास सरककर जमीन पर जा गिरा और पानी फर्श पर फैल गया। उनकी आंखों में आंसू भर आये। उन्हें आज से 30 वर्ष पहले का वह दृश्य याद हो आया, जब गाँव से उनके पिता की गंभीर बीमारी का पत्र आया था, तो उन्होंने जवाब भेजा– यह बच्चों की पढ़ाई का समय है, मैं मज़बूर हूँ। भूत के लिये भविष्य को नष्ट नहीं कर सकता। और कुछ दिनों बाद पिता की मृत्यु का समाचार मिला तो गाँव पहुँचकर उन्होंने खूब धूम–धाम से क्रिया कर्म निपटाया था। अब उनके आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे।

यक्ष प्रश्न

बेटा गलती हो गयी मुझे माफ कर दो– वृद्ध पिता ने अपने झुर्रीदार कंपकपाते हाथों को जोड़कर, कातर दृष्टि से, अनुनय–विनय की मुद्रा में उससे टूटे हुए बर्तन की ओर देखते अपने क्रोधित बेटे से कहा। इतने में पास खड़ा नाती 'नीलू' अपने पिता को लगभग घूरते हुए दादा से बोल पड़ा अरे दादा जी तुम्हारी तो बीत गई, ये बताओ अब मेरे पापा बुढ़ापे में किसमें खायेंगे। और माहौल में एक अजीब सी खामोशी छा गई।

संघर्ष और उथल–पुथल के बिना जीवन बिल्कुल नीरस हो जाता है।
इसलिए जीवन में आने वाली विषमताओं को सह लेना ही समझदारी है।

– विनोबा भावे

ईश्वर ने समझ की कोई सीमा नहीं रखी है।

– बेकन

शनि षिंघ्नापुर की यात्रा

रवि शंकर
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

अपने पिछले लेख में मैंने नासिक तक की यात्रा का वर्णन किया था। नासिक के बाद हम लोग शनि षिंघ्नापुर गये थे। शिर्डी से हम लोग एक वैन से शनि षिंघ्नापुर रवाना हुए। शनि षिंघ्नापुर पहुँचने से पहले वैन को रास्ते में कुछ लोगों द्वारा रूकवा दिया। ड्राइवर ने बताया कि यह लोग गन्ने का रस पिलाते हैं। हममें से किसी की कुछ भी पीने की इच्छा नहीं थी, लेकिन ड्राइवर ने कुछ पूछे बिना ही वैन रोक दी और बाहर निकल गया। लगता था जैसे ड्राइवर का इन लोगों से कुछ कॉन्ट्रेक्ट था। वैन से बाहर निकलकर हमने देखा कि पुराने कोल्हू के तरीके से बैल को जोतकर गन्ने का रस निकाला जा रहा था। इस तरीके से नहीं जैसे हम लोग मशीन से गन्ने का रस निकलते हुए देखते हैं। करीब आठ–दस लोग बैलों को हांककर कोल्हू के तरीके से रस निकालने का काम कर रहे थे। वो इलाका पूरी तरह जंगल था, लगता था वहाँ बिजली की सुविधा भी नहीं थी। खैर, गन्ने का रस पीकर हम लोग मुख्य जगह शनि षिंघ्नापुर पहुँचे। वहाँ पहुँचते ही वैन के पास हाथ में पूजा की थाली लिये हुए, पीली धोती लिए हुए करीब 5–6 लड़के इकट्ठा हो गये। जैसा कि सभी धार्मिक स्थलों पर होता है इस तरह के लोग पूजा करवाने के लिए घेर ही लेते हैं। हमने उनसे कहा कि भई हम लोग पूजा के लिए आये हैं। उनका कहना था कि मन्दिर में केवल पीली धोती पहनकर ही पूजा की जा सकती है, जो कि उनके पास थी ओर वहाँ पास की टंकी में नहाना था। टंकी कुछ इस प्रकार की थी जैसा कि हमारे कार्यालय के पीछे बड़े पेड़ के पास बनी है। नहाने के बाद उनकी धोती वहीं से पहनकर पास में बने मन्दिर में पूजा के लिए जाना था। पूजा की सामग्री भी उनसे ही लेनी थी, जिसमें मुख्य चीज सरसों का तेल व दूध था। यही दो मुख्य सामग्री मन्दिर में चढ़ाई जाती थी। हम पाँच में से केवल दो दोस्त देवू चौधरी व तजेन्द्र ही पूजा के लिए आये थे बाकि सब घूमने के लिए थे इसलिए इन दोनों ने अपने ऊपर थोड़ा सा पानी डाला और धोती पहनी और पूजा की सामग्री के साथ मन्दिर की ओर चल पड़े।

मन्दिर में पूजा करने वालों की अलग लाइन थी, बाकि लोग मन्दिर में सीधे प्रवेश कर रहे थे। हम लोग मुख्य पूजा स्थल पर पहले पहुँच गये जो कि लोहे की बाड़ से घिरा था। एक पत्थर की बड़ी शिला ऊँचाई पर रखी थी जिस पर तेल व दूध को चढ़ाया जा रहा था। वहाँ मौजूद पुजारी आने वाले भक्त से दूध की थैली लेकर भक्त की पीठ पर मारता। दूध भक्त के शरीर पर फैलता व थैली का बचा दूध शिला पर चढ़ाया जाता। फिर सरसों का तेल भी शिला

पर चढ़ाया जाता व भक्त को तुरन्त आगे की तरफ खिसका दिया जाता। यह प्रक्रिया इतनी तेजी से होती थी कि इसमें एक मिनट से भी कम समय लगता था। मन्दिर काफी बड़ा बना हुआ था। इसमें एक दो जगह विशेष अनुष्ठान भी चल रहे थे। ये अनुष्ठान शिला पर तेल व दूध चढ़ाने के बाद आयोजित किये जाते थे। खास बात थी कि भक्तों के लाइन लगाने की जगह पर टीन शेड का इंतजाम था। अन्यथा वहाँ इतनी गर्मी थी कि खड़ा होना मुश्किल था और जमीन तप रही थी। सामान्यतः कई मन्दिरों में जहाँ भक्त लाइन लगाते हैं, छाया का इंतजाम नहीं रहता है। वहाँ पूजा के बाद हम सब इकट्ठे हुए तो अनुष्ठान देखने लगे। एक गौरवर्ण लम्बे व्यक्ति को अनुष्ठान कराते देखा। वहाँ खड़े कुछ लोगों से उनके बारे में पूछा तो पता लगा कि वो पुलिस के उच्चाधिकारी थे और शनि दोष के निवारण के लिए अनुष्ठान कर रहे थे। हम लोग मन्दिर और घूमना चाह रहे थे लेकिन धूप की तेजी बढ़ती जा रही थी और जमीन भी तपती जा रही थी, हम लोग नंगे पैर थे, लिहाजा हम जल्दी से वैन की ओर लपके।

एक प्रसिद्ध मन्दिर को पूरी तरह न देख पाने का मलाल हो रहा था। यह भारत का सबसे बड़ा शनि मन्दिर है। मन्दिर के बाहर कुछ चीजें भी बिक रही थी। जिसमें प्रमुख थी, घोड़े की नाल। इसे घर पर वास्तु की दृष्टि से लगाया जाता है। इसके अलावा शनि दोष निवारण के लिए लोहे की अगूंठी व अन्य मिश्रित धातुओं की अगूँठियां भी थीं। मैंने एक घोड़े की नाल खरीदी। वहाँ लोगों ने बताया कि यहाँ की घोड़े की नाल खरीदने लोग दूर–दूर से आते हैं। इसके बाद जब हम वैन के पास पहुँचे तो धोती व पूजा सामग्री जिन लोगों ने दी थी, वे लोग आ गये। धोतियाँ वापस करनी थी क्योंकि पूजा सामग्री के पैसे मन्दिर से आने के बाद देने थे। हमारे बीच में से किसी ने कह दिया कि हमारे पास पैसे नहीं हैं तब उन लोगों ने बताया कि आप हमारा पता लेकर चले जाइये पैसे मनी ऑर्डर से भिजवा देना। उन्होंने कई उदाहरण बताये जिसमें लोगों ने घर जाकर पैसे भिजवाये व कुछएक मनी आर्डर भी दिखाने लगे। हम लोगों ने उन्हें पैसे दिये और वैन से वापस शिर्डी लौट गये।

प्रसिद्ध शनि मन्दिर को देखना एक अच्छा अनुभव था। इस प्रकार की यात्रायें आपको वास्तविकता का ज्ञान कराती हैं व किंवदतियों से भी परिचय कराती हैं। ऐसे अनुभव जीवन भर याद रहते हैं व आपका ज्ञानवर्धन करते हैं। इसलिए हर यात्रा एक पाठ समान जैसी लगती है।

पानी और उसका बुलबुला एक ही चीज है। उसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा
एक ही चीज है, फर्क यह है कि एक परिमित है, दूसरा अनंतय एक परतंत्र है, दूसरा स्वतंत्र।

– रामकृष्ण परमहंस

एक अनोखी यात्रा

अजय त्यागी
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

बात उन दिनों की है, जब कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) इलाहाबाद में सेवा करने का मुझे सुअवसर प्राप्त हुआ था। दिनांक 23.08.1990 को मात्र छः माह ही बीते थे कि देश में जनगणना का कार्य पूरी क्षमता से प्रारम्भ हो गया था। भारत की जनगणना विश्व के सबसे बड़े प्रशासनिक कार्य के अन्तर्गत आती है, जिसको विधिवत सम्पन्न करने के लिए काफी संख्या में अधिकारियों/कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है। प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), इलाहाबाद कार्यालय में कर्मचारियों की अत्यधिक संख्या होने के कारण जनगणना अथवा चुनाव के कार्यों में हमारे कार्यालय के कर्मचारियों की भागीदारी अपरिहार्य हो जाती है। उक्त दोनों ही कार्य अत्यधिक संवेदनशील माने जाते हैं तथा अधिकतर सरकारी कर्मचारी इस तरह के कार्य से बचने की कोशिश करते हैं, कारण कि इन कार्यों में कार्य अवधि को निश्चित सीमा में बाँधना कठिन होता है तथा सरकारी कर्मचारी चौबीस घंटे का नौकर है, इसका एहसास इन्हीं अवसरों पर होता है। छः माह की सेवा पूरी करते ही जनगणना से मेरा पाला पड़ा तथा एक अलग प्रकार की जिम्मेदारी का अनुभव हुआ जो छः माह की सेवा के दौरान पहले कभी नहीं हुआ था। चूँकि सरकारी सेवा में मेरा पहला पदार्पण था तथा बेरोजगारी की फौज से निकलने की खुशी मन में थी, इसलिए जिम्मेदारी को पूरे मनोयोग से निभाने का उल्लास संजोये जनगणना जैसे दुरुह कार्य को पूरी लगन से सम्पन्न किया। यद्यपि नयी नौकरी तथा अनुभव की कमी के कारण अनेक कटु अनुभव हुए पर पूरे कार्य के दौरान सहकर्मियों का सहयोग तथा माँ वैष्णो देवी की कृपा से कार्य आसान हो गया। जनगणना को पूरा हुए अभी तीन माह भी नहीं हुए थे कि देश में होने वाले लोक सभा चुनावों की सरगर्मी चारों तरफ फैलने लगी। स्पष्ट था कि इस चुनाव में भी कार्यालय कर्मियों की अनचाही सहभागिता अपरिहार्य थी तथा कार्य की अल्प अवधि में ही चुनाव सम्पन्न कराने जैसे मुश्किल कार्य से मेरा पाला पड़ गया था।

इलाहाबाद में मई का महीना मौसम के लिहाज से अत्यन्त कष्टकारी होता है। सूर्य देव के प्रचंड वेग के कारण जहाँ दोपहर में सामान्य जीवन कठिन था, वहीं चुनाव सम्पन्न करना एक कठिन चुनौती थी। कचहरी में तीन दिन का प्रशिक्षण कार्य समाप्त होने के बाद चुनाव सामग्री प्राप्त कर टीम के अन्य सदस्यों के साथ पोलिंग बूथ पर जाना एक कठिन बाध्यता थी। भीड़–भाड़ तथा अफरा–तफरी के वातावरण में चुनाव सामग्री प्राप्त कर हम सभी साथीगण ट्रक में सवार हो पहले से ही नियत मतदान स्थल के लिए प्रस्थान कर गये, पर सुबह से मतदान स्थल तक पहुँचने की ज़द्दोज़हद, प्रचंड गर्मी तथा उमस भरा वातावरण एवं ट्रक की यात्रा एवं

टैंकर के प्रदूषित जल में अपना काम करना शुरू कर दिया था। किशोरावस्था का अविवाहित, अव्यवस्थित जीवन, ऊपर से नौकरी के प्रारम्भिक दिनों में ही इस तरह का कठिन दायित्व तथा लगातार पाँच दिनों के अथक परिश्रम के कारण मानसिक तथा शारीरिक रुप से क्लान्त एक–एक क्षण कितना मुश्किल था; बुखार से शरीर तप रहा था तथा चुनाव सम्पन्न कराने के अलावा कोई विकल्प नहीं था, ऐसी स्थिति में प्रतिपल, प्रतिक्षण मुझे माँ वैष्णो देवी का ही सहारा था। मन ही मन माँ की याद तथा चुनाव निर्विघ्न समाप्त हो जाने पर माँ का दर्शन करने का संकल्प करने के बाद मन कुछ शान्त हुआ। पर घर पहुँचते–पहुँचते स्वास्थ्य जवाब दे गया था तथा अत्यधिक बुखार एवं बदन दर्द के कारण स्थिति काफी नाजुक थी। मकान मालिक तथा कार्यालय के मित्रों द्वारा चिकित्सालय में भर्ती कराया गया जहाँ पीलिया की बढ़ी स्थिति का पता चला जो शायद चुनाव के दौरान दुषित जल के प्रयोग का परिणाम था। इस कठिन घड़ी में मित्रों का सहयोग तथा माँ वैष्णो देवी का स्मरण ही सहारा था। ऐसे में माँ के प्रति आस्था और प्रबल हुई तथा शीघ्रातिशीघ्र माँ के दर्शन के लिए मन उद्विग्न होने लगा, पर दफ्तर का कार्य तथा अकेलेपन की विवशता एवं अनुभव की कमी दर्शन में रुकावट थी, जिसे दूर किया मेरी उत्कट अभिलाषा तथा मेरी बड़ी बहन के सहयोग ने।

सन् 1993 में उपर्युक्त घटना के लगभग दो वर्ष बाद माँ वैष्णो देवी के दर्शन का निश्चय कर लिया गया। यात्रा की कठिनाई तथा जानकारी की कमी को मित्रों के सहयोग से दूर करने का प्रयास किया गया। हालाँकि मित्रों की राय मुझसे भिन्न थी तथा उन्होंने इसे विवाहोपरान्त करने का सुझाव दिया था परन्तु विवाह के सम्बन्ध में अनिश्चितता का वातावरण अभी बना हुआ था एवं इस सम्बन्ध में भी माँ से चर्चा किया जाना आवश्यक था। दिल्ली में रहने वाली बड़ी बहन से ट्रेन आरक्षण के लिए निवेदन किया जिसने तत्परता दिखाते हुए झेलम एक्सप्रेस से दिल्ली से जम्मू तक जाने का आरक्षण करा दिया। इलाहाबाद से दिल्ली बहन के घर तक प्रयाग राज से पहुँच गया तथा वहाँ से रात्रि में जम्मू के लिए प्रस्थान कर गया।

जम्मू से कटरा बस से जाना होता है तथा कटरा से 16 किलो मीटर की पैदल पहाड़ी यात्रा करनी होती है जो उस समय को देखते हुए काफी रोमांचक तथा कठिनाई भरी थी। जैसा कि पहले ही बता चुका हूँ, उस समय मेरी अवस्था मात्र 21 वर्ष की थी तथा यात्रा में कोई साथी भी नहीं था। इतनी लम्बी यात्रा पर पहली बार निकलने तथा रुकने के स्थान की जानकारी न होने के कारण मन अन्दर से सहमा हुआ था, बस भरोसा था तो माँ वैष्णो देवी का जो विचलित मन को मजबूती प्रदान कर रहा था। कटरा पहुँचते ही यात्रियों का हुजूम देखने को मिला जो जयकारा लगा रहे थे तथा अति उत्साह के साथ आगे बढ़ रहे थे। इन यात्रियों में बच्चे–बूढ़े, नौजवान, महिलायें सभी थे। इस प्रकार सम्पूर्ण वातावरण भक्तिमय तथा आनन्ददायक बना हुआ था। अक्सर लोग अपना सामान कटरा में किसी होटल या धर्मशाला में रखते हैं पर जानकारी के अभाव में कुछ हम वयस्क लड़कों को साथ लेकर ही हमने आगे की यात्रा शुरु की। लगभग दो किलोमीटर चढ़ाई करने के बाद ही सामान के साथ आगे बढ़ना कठिन होने लगा था। अतः टोली के भी सदस्यों के सामूहिक निर्णय से सामान एक रेस्टोरेन्ट में रख दिया गया। माँ वैष्णो

का जयकारा लगाते पहाड़ के मनोरम वातावरण का आनन्द लेते दर्शनार्थियों के हुजूम के साथ माँ के चरणों के स्पर्श एवं आर्शीवाद की प्रबल इच्छा से कदम दर कदम आगे बढ़ने लगे तथा ऑक्सीजन की कमी के बावजूद रास्ता आसान लगने लगा। वैष्णो देवी का यात्रा मार्ग काफी सुरक्षित तथा मनोरम है, जहाँ एक तरफ प्राकृतिक सुषमा अत्यन्न मनमोहक है वहीं यात्रा मार्ग पर प्रशासन तथा स्वयं सेवी संस्थाओं की चाक–चौबन्द व्यवस्था यात्रा की थकान को मिटाने में समर्थ है। ब्रह्मकुमारी पहुँचते ही रात हो चुकी थी तथा ठंड का एहसास होने लगा था, जिसके लिए मानसिक तैयारी नहीं थी, पर मंदिर प्रबंधकों द्वारा उपलब्ध कराये गये कम्बल से राहत मिली। ब्रह्मकुमारी में लगभग दो घंटे विश्राम के बाद रात्रि में ही पुनः यात्रा शुरु की गयी जो लगभग ढाई बजे भोर में अपने अन्तिम मुकाम पर पहुँची। भीड़ बहुत थी, दर्शन कठिन था, माँ के जयघोष से समूचा वातावरण गुंजायमान था। दो वर्ष पूर्व कठिन समय में माँ का स्मरण तथा उनके द्वारा प्रदान सम्बल के बाद उनके दर्शन की अभिलाषा से बिताये प्रतिदिन, प्रतिक्षण के पूरा होने का वह अनमोल क्षण आ गया था जिसे पूरा करना मेरे लिए सपना था; अतः मन पुलकित तथा रोमांच से भरा हुआ था जिसका शब्दों में वर्णन असंभव है। यात्रा की सारी थकान माँ के कुछ पल के दर्शन से समाप्त हो गयी तथा मन संतुष्ट तथा शान्त हो गया जैसे जीवन में सब कुछ मिल गया हो तथा अब कुछ पाने की इच्छा शेष न रह गयी हो। अब वहाँ से लौटने की बारी थी। यात्रा की थकान थी पर मन में उत्साह तथा माँ के दर्शन का आनन्द उस पर भारी था। ट्रेन में लौटने का आरक्षण न होने के कारण कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ा पर इतनी लम्बी यात्रा में यह स्वाभाविक था। इस प्रकार दो दिन बाद इलाहाबाद पहुँच कर अपना कार्यभार ग्रहण किया।

माँ वैष्णो देवी की इस यात्रा को लगभग 20 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं पर आज भी यह मेरे मानस पटल पर एक अमिट छाप के रुप में विद्यमान है। कठिनाई के समय में माँ द्वारा प्रदत्त सम्बल अविस्मरणीय है। आज मेरे पास सब कुछ है। माँ के आशीर्वाद से माया एवं काया दोनों में भरपूर वृद्धि हुई है। आज भी कठिनाई के समय माँ का स्मरण ताकत प्रदान करता है। पत्नी तथा तीन बच्चों के साथ बिताये जा रहे सुखी जीवन को माँ का प्रसाद मानता हूँ। वैसे तो माँ का स्मरण हमेशा मन में बना रहता है। पर भक्ति में शक्ति का प्रतीक माँ वैष्णो के, सपरिवार दर्शन की अभिलाषा मन में बलवती है जिसे पूरा किया जाना अभी शेष है।

प्रेम और संशय कभी साथ–साथ नहीं चलते।

– खलील जिब्रान

प्रेम का एक ही मूलमंत्र है और वह है सेवा।

– प्रेमचंद

यात्रा-संस्मरण

रवि शंकर
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

जिन दिनों मैं ग्वालियर में कार्यरत था, उन्हीं दिनों (वर्ष 1996) मुझे पीलिया हो गया था। इस रोग के विषय में मुझे अधिक जानकारी नहीं थी, डॉक्टर का इलाज चल रहा था, लेकिन फिर भी ठीक नहीं हो पा रहा था बल्कि रोग शनैः–शनैः बढ़ रहा था। हालांकि मैं अवकाश पर था, परन्तु उस समय अकेला ही रहता था। इस रोग में आराम की अत्यधिक आवश्यकता होती है जो मैं अकेले रहने के कारण कर नहीं पा रहा था। जब हालत बिगड़ने लगी तो एक दिन मैं सुबह ही डॉक्टर के पास जा पहुँचा और मेरी तबियत देखते हुए उन्होंने तुरन्त घर जाकर आराम करने की सलाह दी और रास्ते में कोई तकलीफ न हो इसलिए कुछ दवायें भी दे दीं। मैंने कमरे पर पहुँचकर जरूरी सामान उठाया और रेलवे स्टेशन पहुँच गया। छत्तीसगढ़ एक्सप्रेस दोपहर लगभग 1:30 बजे ग्वालियर से सहारनपुर के लिए रवाना होती है। रिजर्वेशन न होने के कारण मैं जनरल डिब्बे में पहुँचा और संयोगवश सीट भी मिल गयी। जब गाड़ी ग्वालियर से आगे रवाना हुई तो किसी छोटे स्टेशन पर रुकी। यहाँ मज़दूरों के दो–तीन परिवार डिब्बे में सवार हुए जो सीट न मिलने के कारण नीचे फर्श पर ही बैठ गये। परिवार के साथ पाँच–छः बच्चे भी थे जो लगभग मेरी किनारे की सीट के पास बैठकर किसी खेल में मग्न हो गये। मैं भी उनका खेल देख रहा था, हालांकि खेल मेरी समझ से बाहर था। लेकिन जिस तरह वे खेल रहे थे और आपस में बोल रहे थे, वो आकर्षित कर रहा था। मैं उन्हें देखने में इतना मग्न था कि कब टी.टी.ई. डिब्बे में टिकट चैक करता हुआ मेरे पास आ गया, पता ही नहीं चला। मेरे बाद उस मज़दूर परिवार से टिकट माँगा। उन्होंने टिकट निकालकर दिखाये व फिर टी.टी.ई. से कुछ बातचीत करते हुए दरवाजे तक चले गये। मैं बच्चों का खेल देखता रहा। इसी बीच टी.टी.ई. के कुछ जोर से बोलने की आवाज सुनायी पड़ने लगी। मज़दूर परिवार के सभी पुरुष उसके पास जाकर कुछ समझा रहे थे, लेकिन टी.टी.ई. सुन नहीं रहा था। अन्त में जो सुनाई पड़ा यह था कि उनके पास पूरे टिकट नहीं थे और पैनल्टी के भी पूरे पैसे नहीं थे। कुछ कम पड़ रहे थे। वे लोग टी.टी.ई. को मना रहे थे, लेकिन टी.टी.ई. ने परिवार के पास आकर अगले स्टेशन पर उतरने की बात कह दी। अगला स्टेशन शायद आगरा था। ऐसे मामलों में अन्य यात्री सामान्यतः चुप ही रहते हैं। चूंकि टी.टी.ई. मेरे पास ही खड़ा था इसलिए मैंने पूछ ही लिया क्या हो गया। टी.टी.ई. ने बताया कि इनके पास टिकट के पूरे पैसे नहीं हैं। जैसे ही अगले स्टेशन पर गाड़ी रुकी, परिवार के लोग उतरने लगे। कुछ लोग गाड़ी में चढ़ भी रहे थे। धीरे–धीरे परिवार के सभी लोग उतर गये, लेकिन बच्चे अभी भी खेल ही रहे थे, इस बात से बेखबर कि उनका पूरा

परिवार स्टेशन पर उतर चुका है और डिब्बे में चढ़ने वाले लोग भी उन्हें इधर–उधर कर रहे हैं। बाहर जाकर परिवार वालों को बच्चों का ध्यान आया होगा। एक आदमी व एक औरत तेजी से भागते हुए डिब्बे में बच्चों के पास आये और बाँह पकड़कर बच्चों को जल्दी–जल्दी खींचने लगे। छोटे बच्चे जैसे नींद से जागे हों या कल्पना के जिस संसार में खोये हुए थे, मानो वह उजड़ गया हो, इस तरह के भाव उनके चेहरे पर आये। वो एक दूसरे का मुँह आश्चर्य से देखते हुए न चाहते हुए भी, बेमन से बाहर जाने लगे। मुझे शायद दया आयी या क्या बात थी मैं कह नहीं सकता। गाड़ी रुकी थी व दरवाज़े पर खड़ा टी.टी.ई. परिवार को 'जल्दी–बाहर निकलो' बोले जा रहा था। मैं धीरे से अपनी सीट से उठकर उसके पास गया। उससे पूछा कितने पैसे कम पड़ रहे थे। उसने शायद 168 रुपये बताया या 268 मुझे पक्का याद नहीं है। मैने उससे कहा ठीक है मैं इनके बाकी पैसे दे देता हूँ। इन्हें अन्दर डिब्बे में आने दो। टी.टी.ई. ने मेरे चेहरे को ध्यान से देखा, फिर एकदम से उनकी तरफ मुड़कर बोला, आ जाओ अन्दर, तुम्हारे बाकी पैसों का इंतजाम हो गया।

परिवार के अन्दर आते ही गाड़ी चल पड़ी। मैने टी.टी.ई. को बाकी पैसे दे दिये। उसने परिवार वालों से कुछ बात की। मैं अपनी सीट पर बैठ गया और देखा कि छोटे बच्चों ने अपनी वही पहले वाली जगह पकड़ ली और खेल में इस तरह मग्न हो गये मानो कुछ हुआ ही नहीं। मैं भी फिर से उनका खेल देखने में मग्न हो गया।

मूढ़मति इंसान धन संपत्ति जोड़ने में जीवन खपा डालता है। संचय करने की प्रवृत्ति उसे अशांत बनाए रखती है। मनुष्य पदार्थों की चिंता करता है, लेकिन पदार्थों को देने वाले का चिंतन नहीं करता। जिस दिन वह चिंता की जगह परमात्मा का चिंतन शुरू कर देगा, उसका सहज ही कल्याण हो जाएगा।

– आदि शंकराचार्य

हम अपने बारे में जो दृढ़ चिंतन करते हैं, जिन विचारों में संलग्न रहते हैं, क्रमशः वैसे ही बनते जाते हैं।

– सुभाषित

बिना मनन किए पढ़ना, बिना पचाए खाने के सामान है।

– वर्क